तरंगों का विज्ञान

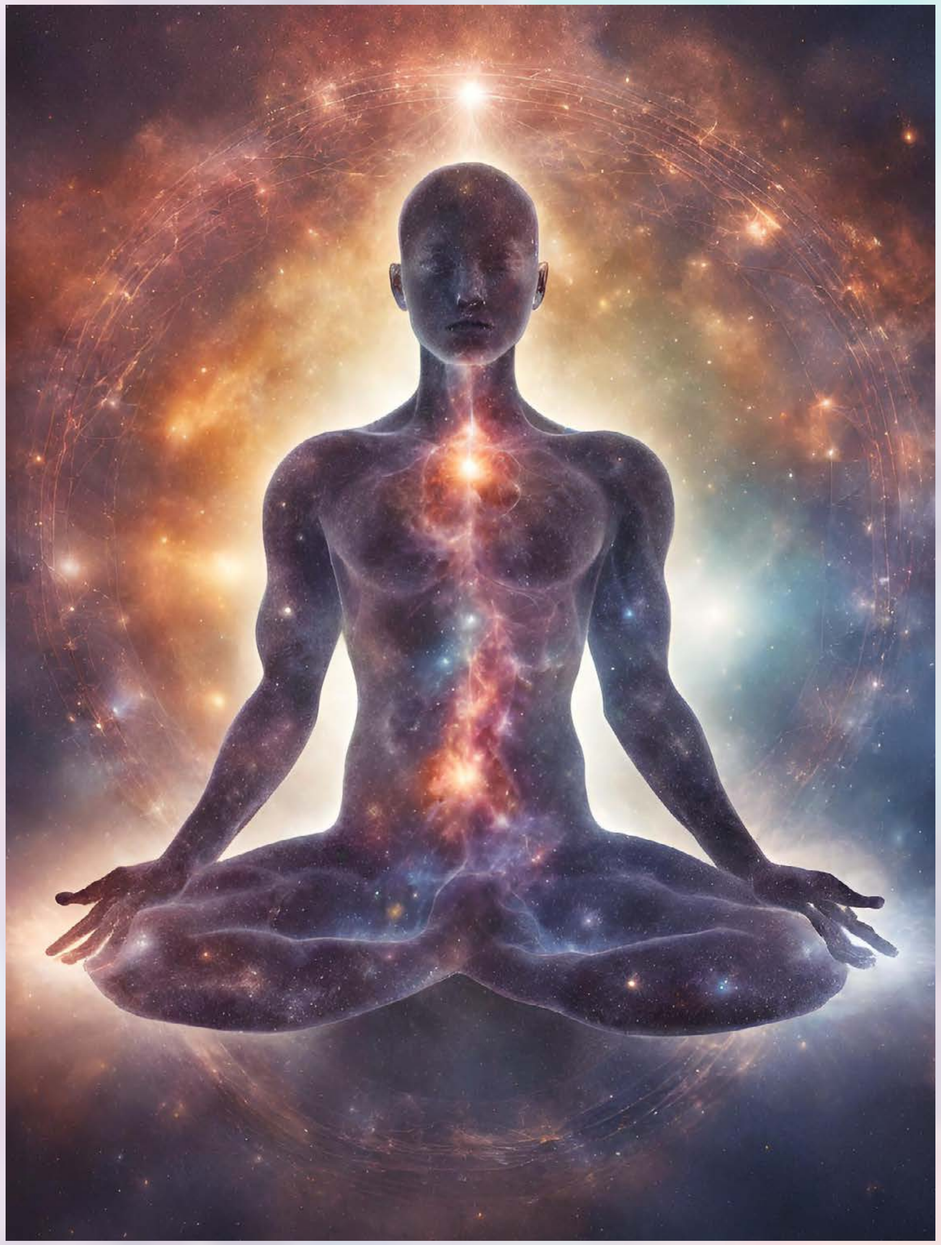

मनुष्य जब शरीरभाव से ऊपर उठता है और अपने-आप को आत्मा समझने लगता है, तो धीरे-धीरे उसके शरीर के आसपास सकारात्मक ऊर्जा की तरंगें निर्माण होने लगती हैं और यह तरंगें तब निर्माण होती हैं जब वह भाषा, जाति, धर्म, देश आदि से ऊपर उठकर अपने को केवल आत्मा समझता है क्योंकि यह सब शरीर के स्तर की बातें होती हैं।

आपकी तरंगें जब इन प्राचीन ग्रंथों की तरंगों में समाहित होंगी तो आपको उन मंत्रों के चैतन्य का अनुभव होगा। प्राचीन गुरु भी, आज भी, तरंगों के माध्यम से विद्यमान हैं।

वे जो कार्य कर गए वहीं कार्य जब आप करने लग जाते हो तो उनके आशीर्वाद तरंगों के माध्यम से आपको प्राप्त हो जाते हैं और फिर एक सामान्य मनुष्य के हाथों से असामान्य कार्य घटित हो जाता है। लेकिन उसके लिए अपने-आप को पवित्र करने की आवश्यकता है। पवित्रता आत्मा का मूल स्वरूप है।

अब एक स्थान पर बैठकर दुनिया के किसी भी कोने में बैठे मनुष्य के बारे में जानकारी प्राप्त करना, यह भी कार्य तरंगों के माध्यम से ही होता है। अपनी तरंगों को विश्व के एक कोने में बैठे मनुष्य तक पहुँचाना और उस मनुष्य की तरंगों का अध्ययन कर जानना कि वह व्यक्ति कैसा है और वापस आ जाना, यह कार्य एक क्षण में हो जाता है। यह ज्ञान भी तरंगों के माध्यम से मुझे मेरे गुरुओं से प्राप्त हुआ है।

कभी-कभी लगता है, मेरे गुरु एक खुली लायब्रेरी हैं, कोई भी व्यक्ति लायब्रेरी में जाकर पुस्तक पढ़ सकता है, वह 24 घंटे खुली ही रहती है। केवल उसकी मेम्बरशिप (गुरुशक्ति से सूक्ष्म में संबंध) आवश्यक है।

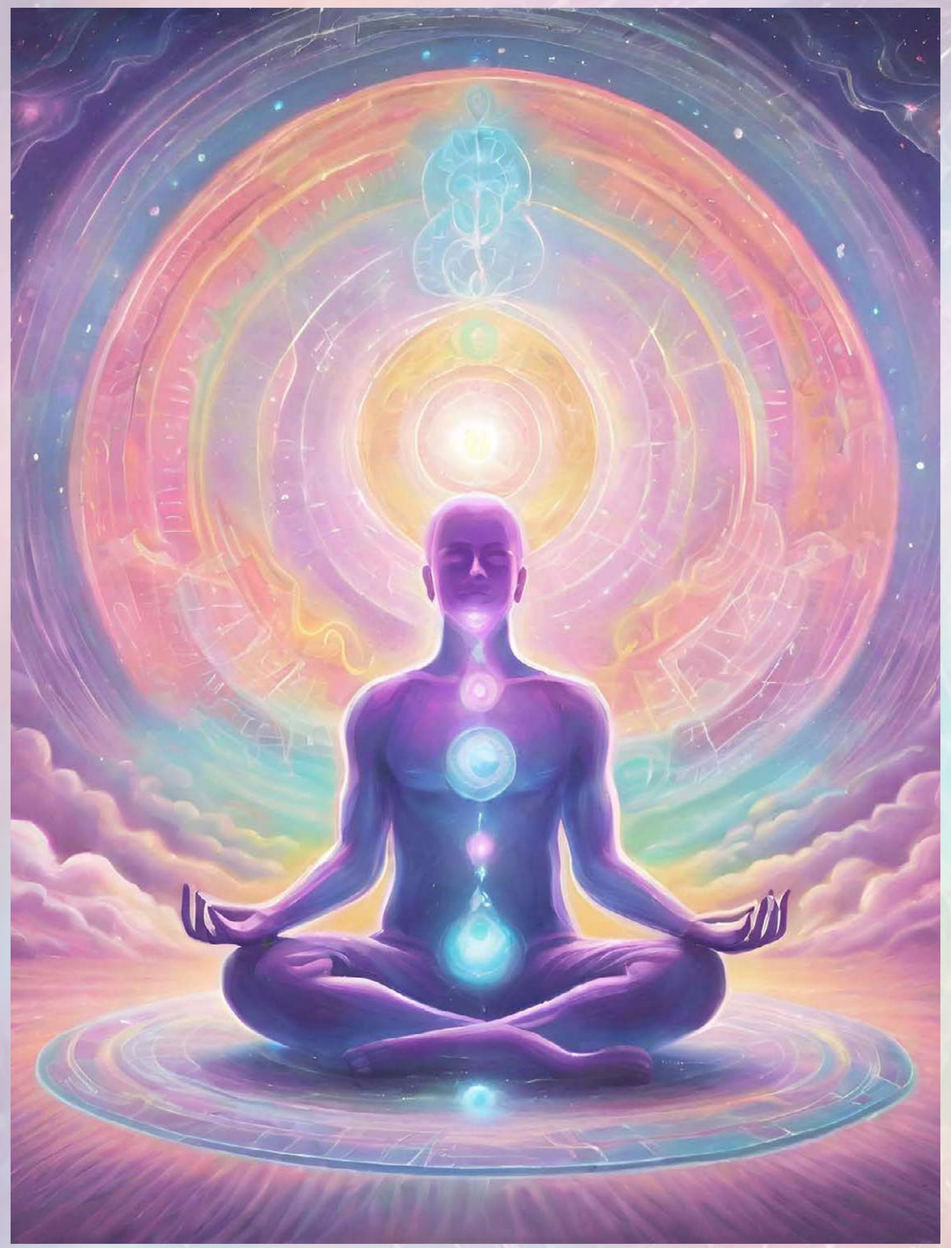

इस तरंग के विज्ञान को समझने के लिए प्रथम आपकी अपनी स्वयं की सशक्त तरंगें होनी चाहिए और सशक्त तरंगों के लिए सशक्त चित्त होना चाहिए।

और सशक्त चित्त के लिए पवित्र और शुद्ध चित्त होना चाहिए।

पवित्र और शुद्ध से हमारा आशय ऐसे चित्त से है जो केवल वर्तमान में ही हो।

जिस चित्त में किसी के प्रति बुरा भाव न हो, सभी के प्रति प्रेम का भाव हो क्योंकि पवित्र शुद्ध चित्त स्वयं ही सशक्त हो जाता है।

चित्तशुद्धि से ही तरंगों के विश्व में प्रवेश मिल सकता है।
- परम पूज्य श्री शिवकृपानंद स्वामीजी
स्रोत: मधुचैतन्य अंक मई-जून, 2016

निसर्ग की विशेषता है- निसर्ग सबको समान रुप से बाँटता है।

निसर्ग कभी गुण-दोष नहीं देखता। कोई मापदण्ड नहीं है शुद्धता का, कोई मापदण्ड नहीं है पवित्रता का, निसर्ग कमी भी कोई भेद-भाव कर ही नहीं सकता, समान एक जैसा !

निसर्ग सबको निःशुल्क प्रदान करता है।
मधुचैतन्य अंक अप्रैल-मई-जून, 2014

कृपा और करुणा का संबंध निसर्ग के साथ है। गुरुकृपा नैसर्गिक है।
स्रोत : मधुचैतन्य अंक मार्च-अप्रैल, 2016

इस तरंग के विज्ञान को समझने के लिए प्रथम आपकी अपनी स्वयं की सशक्त तरंगें होनी चाहिए और सशक्त तरंगों के लिए सशक्त चित्त होना चाहिए।

और सशक्त चित्त के लिए पवित्र और शुद्ध चित्त होना चाहिए।

पवित्र और शुद्ध से हमारा आशय ऐसे चित्त से है जो केवल वर्तमान में ही हो।

जिस चित्त में किसी के प्रति बुरा भाव न हो, सभी के प्रति प्रेम का भाव हो क्योंकि पवित्र शुद्ध चित्त स्वयं ही सशक्त हो जाता है।

चित्तशुद्धि से ही तरंगों के विश्व में प्रवेश मिल सकता है।

- परम पूज्य श्री शिवकृपानंद स्वामीजी

स्रोत: मधुचैतन्य अंक मई-जून, 2016

निसर्ग की विशेषता है- निसर्ग सबको समान रुप से बाँटता है।

निसर्ग कभी गुण-दोष नहीं देखता। कोई मापदण्ड नहीं है शुद्धता का, कोई मापदण्ड नहीं है पवित्रता का, निसर्ग कमी भी कोई भेद-भाव कर ही नहीं सकता, समान एक जैसा !

निसर्ग सबको निःशुल्क प्रदान करता है।

मधुचैतन्य अंक अप्रैल-मई-जून, 2014

कृपा और करुणा का संबंध निसर्ग के साथ है। गुरुकृपा नैसर्गिक है।

स्रोत : मधुचैतन्य अंक मार्च-अप्रैल, 2016

प्रकृति के साथ समरसता

प्रकृति का गुण है 'समरसता'। सबसे समान भाव से मिलती है।
प्रकृति सभी व्यक्तियों को एक समान रूप में उपलब्ध है।

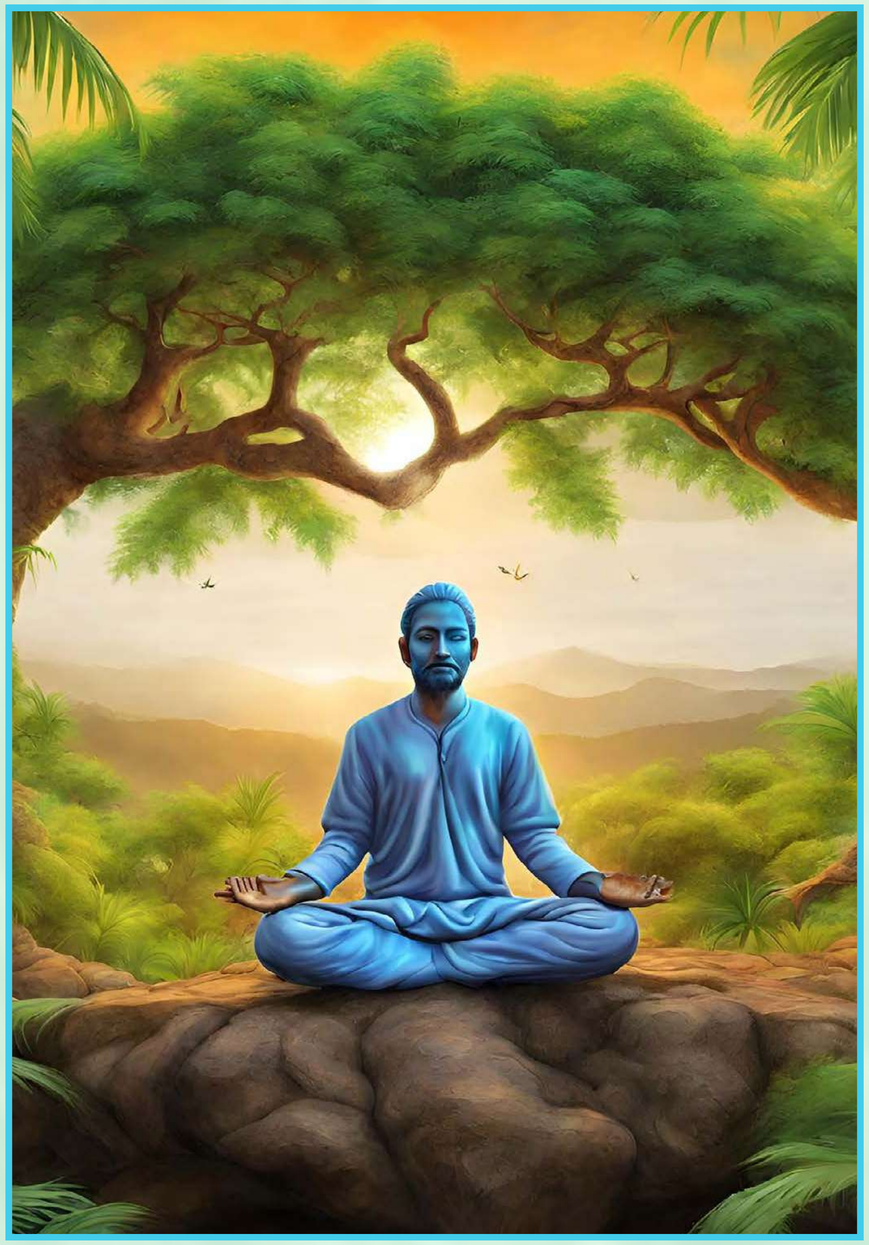

गुलाब की खुश्बु सभी व्यक्तियों को समान रूप से आती है। कोई उसको गुलाब माने तो भी आती है। गुलाब न माने तो भी आती है। तो प्रकृति समान रूप से सबसे व्यवहार करती है।

प्रकृति के सान्निध्य में जाके हमको कोई विचार नहीं आते। जैसे ही हम प्रकृति से समरस होते हैं, हमारे को विचारशून्यता की स्थिति प्राप्त हो जाती है।

और हमारी ऊर्जा जो भूतकाल के विचार करने में और जो भविष्यकाल का विचार करने में खर्च होती है, वही सारी उर्जा हमारे भीतर संग्रह होने लग जाती है। और संग्रह होने के बाद में फिर हम जो भी कार्य करते हैं वह कार्य सर्वश्रेष्ठ होता है।

तो कहने का मतलब, इसके दो प्रकार हैं; जो बुद्धिवादी लोग है वो परमात्मा को प्रकृति समझते हैं, जो भाववाले लोग हैं वो परमात्मा को परमात्मा समझते हैं। तो आप अगर बुद्धिवादी हैं तो आप उसको प्रकृति समझ करके ग्रहण करो, आप अगर भाववादी है तो उसको भगवान समझके ग्रहण करो, परमात्मा समझके ग्रहण करो। लेकिन बात एक ही है, चाहे आप इस तरफ से आओ या आप उस तरफ से आओ।

समर्पण ध्यानयोग, ध्यान की वो पद्धति है जिस पद्धति से एक संपूर्ण योग की स्थिति आप आपके जीवन में प्राप्त कर सकते हैं।

प्रकृति के साथ समरसता

लेकिन बुद्धिवादी तरीके से आने में आपको सारे स्थानों पे, सारे जगह, प्रमाण की आवश्यकता रहेगी। क्योंकि जब तक आपको प्रमाण नहीं मिलेगा तब तक आप उसको मानोगे नहीं। और प्रमाण सब जगह आपको मिलेंगे ही ऐसा जरूरी नहीं। गुरुतत्त्व सदैव प्रकृति में जाकर प्रकृति से समरसता स्थापित करता है और प्रकृति से ग्रहित अनुभूति का सुप्त (मीतरी) ज्ञान, सजीव ज्ञान ग्रहण करता है और इस प्रकृति के बहुमूल्य खजाने को अपने बाँटने के स्वभाव के कारण जनसामान्य तक बाँटता है। इस बाँटने के स्वभाव के कारण ही प्रकृति की शक्तियाँ इनके पास खिंची चली आती है। सचमुच, प्रकृति में देखो तो प्रकृति सबको देते ही रहती है। प्रकृति का गुणधर्म है देना। इसीलिए जो प्रकृतिमय हो गया, वह देना स्वयं ही सीख जाएगा।

स्त्रोत : 'हिमालय का समर्पण योग' ग्रंथ भाग - 1

योग के अंदर अपने अस्तित्व को शून्य करना। शून्य करना, इतना शून्य करना और प्रकृति से समरस हो जाना। और प्रकृति से समरस होने के बाद में आप विश्व के किसी भी व्यक्ति के साथ जुड़ सकते हैं।

सामान्य मनुष्य का और योगी का एक ही अंतर है। एक है- शरीर की प्रधानता वाला जीवन। और दूसरा है - आत्मा की प्रधानता वाला जीवन।

तो योग यानी केवल योगासन नहीं। योग का एक विशाल क्षेत्र है। इसके कारण हमारी प्रकृति के साथ समरसता स्थापित हो जाती है। और समरसता स्थापित होने के बाद में प्रकृति हमारे बीच में से बहने लग जाती है।

आपके आत्मा के सान्निध्य में होंगे, आत्मा आपका गुरु बनेगा, वो आपको बराबर मार्गदर्शन करेगा और वो करेक्ट डिसिजन होंगे।

- परम पूज्य श्री शिवकृपानंद स्वामीजी

स्त्रोत : मधुचैतन्य अंक जुलाई-अगस्त, 2015

प्रकृति की सेवा

आपने प्रकृति से बहुत कुछ लिया है, रोज लेते हैं। रोज हम साँस लेते है, रोज हम ओक्सिजन (प्राणवायु) लेते हैं और रोज हम कार्बन डाइऑक्साइड छोड़ते हैं। सिर्फ श्वास-उच्छ्वास से नहीं, हम अपने व्हीकल यूज़ करके (वाहनों का उपयोग करके), हम जो भी वाहन चलाते हैं, यदि वो पेट्रोल-डीझल से चलने वाले हैं तो हम धुँआ छोड़ते ही होंगे। आजकल साइकल से जानेवाले लोग तो कम ही नजर आते हैं! तो इसकी जगह पे यदि हम अपने जीवन में पाँच वृक्ष लगा लें..! प्रत्येक व्यक्ति ने करना चाहिए। अपने पूरे जीवनकाल में पाँच वृक्ष लगाओ। ये आपकी तरफ से प्रकृति को गिफ्ट (भेंट) है। आप प्रकृति से तो लेते हैं न। शुद्ध हवा लेते हैं, पानी लेते हैं, आप भोजन लेते हैं.. सब प्रकृति से ले रहे हैं। तो आपने प्रकृति को क्या दिया? तो अपनी तरफ से प्रकृति को आप क्या दे सकते हैं, वो सोचो।

तो आप जितना निःस्वार्थ काम करेंगे ना, उतनी आपको अंदर से खुशी होगी। और वो खुशी ना, आपको कोई नहीं दे सकता। वो स्वयं आप ही अपने-आपको दे सकते हैं। आप वो वाली खुशी लीजिए।

- परम पूज्या गुरुमाँ

स्रोत : मकरसंक्रांति प्रवचन, 2016

समर्पण ध्यान का अर्थ

समर्पण + ध्यान

तो पहले समर्पण शब्द का अर्थ समझ लो और बाद में उसको ध्यान से जोड़ लो। ध्यान यानी अभ्यास, ध्यान यानी प्रेक्टिस। समर्पण शब्द से प्रायः हम अर्थ लगाते हैं समर्पण यानी, देखिए, जब आप शरीरभाव में रहते हैं ना, तो शरीर से बाहर का सोच ही नहीं सकते तो समर्पण का अर्थ लगाते हैं-

कुछ वस्तु को समर्पित करना, अपने शरीर को समर्पित करना, कुछ समय दान देना, कुछ धन देना यानी आप समर्पण का अर्थ उतना ही लगाते हैं जिसको दिखाया जा सकता है, जिसको देखा जा सकता है, जिसको अनुभव किया जा सकता है लेकिन समर्पण का अर्थ इससे भी बहुत विशाल है, बहुत बड़ा है। ये सारे अर्थ हो गए शरीर लेवल के ऊपर।

ये शरीर लेवल से बढ़करके भी एक और अर्थ है वो है समरस होना। समरस होना यानी आप माध्यम के साथ इतने समरस हो जाओ, इतने समरस हो जाओ कि माध्यम के अंदर के भीतर जो कुछ है, माध्यम यानी शरीर नहीं, माध्यम यानी वो आत्मा, उस आत्मा के अंदर जो कुछ है वो सब आपके अंदर प्रवाहित होना प्रारंभ हो जाए, आपके अंदर बहना चालु हो जाए। आप के अंदर उसका प्रगटीकरण होना चालु हो जाए।

समाहित यानी ये आपका संपूर्ण अस्तित्व शून्य हो जाना, एकदम खाली पाईप हो जाना, एकदम निखालस हो जाना, एकदम शुद्ध हो जाना, एकदम पवित्र हो जाना। ऐसा जब आप होंगे तो माध्यम की सारी शक्तियाँ, माध्यम की सारी सामूहिकता, माध्यम की सारी कलेक्टिविटी आपके भीतर से बहना प्रारंभ हो जाएगी।

- परम पूज्य श्री शिवकृपानंद स्वामीजी

स्रोत : प्रवचन 1-1-2014

'समर्पण ध्यान' भी सभी को समान रूप से प्राप्त है, निःशुल्क प्राप्त है। सारे निसर्ग के गुण बराबर समानता के साथ। ऐसे ही महाशिवरात्रि के दिन 20 साल पूर्व 'समर्पण ध्यान' का अधिकृत रूप से प्रचार प्रारंभ हुआ था।

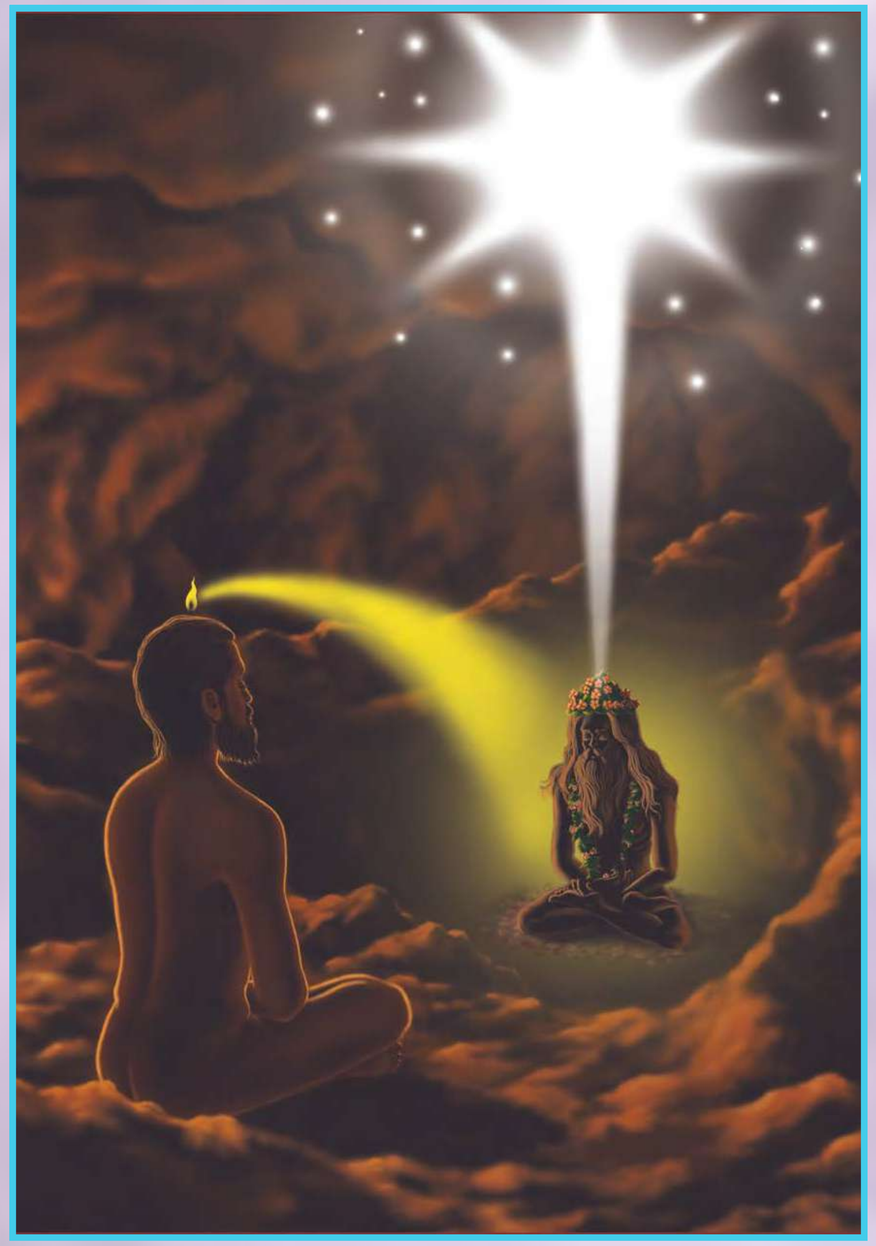

जिसके प्रति हमारा समर्पण है, उसकी स्थितियाँ, उसके गुण, उसकी अवस्था हमको प्राप्त हो जाना, उसका ज्ञान हमें प्राप्त हो जाना।

समरसता से मेरा आशय उस भीतर की आत्मा के साथ सान्निध्य प्राप्त करना, उस पवित्र आत्मा के साथ अपने-आपको जोड़ देना। ताकि उस आत्मा की पवित्रता, उस आत्मा की सर्वमान्यता, उस आत्मा की समानता, उस आत्मा की शुद्धता आपके भीतर भी वो विशेषताएँ उतरना प्रारंभ हो जाए।

आत्मा की आत्मा के साथ समरसता स्थापित करो। अगर ऐसी समरसता स्थापित हो गई तो माध्यम के गुण, माध्यम की शक्तियाँ, माध्यम का ज्ञान आपके भीतर भी धीरे-धीरे, धीरे-धीरे, धीरे-धीरे, धीरे-धीरे उतरना प्रारंभ हो जाएगा।

आप आपके फैमिली (कुटुम्ब) को समय देते हो, आप आपके समाज को समय देते हो, आप आपके व्यवसाय को समय देते हो, आप आपके ऑफिस को समय देते हो, संगठन को... सबको समय देते हो, अपने को छोड़कर के। यानी हम उसी मालिक को भूल रहे है, जिस मालिक के घर में हम रहते हैं।

तो आवश्यकता है, उस शिवरुपी आत्मा को समय देने की। आवश्यकता है, उस शिवरूपी आत्मा के पास जाने की, करीब जाने की। जितने पास जाएँगे, जितने करीब जाएँगे, आपके भीतर की खूब प्रतिभा बाहर आएगी।

- परम पूज्य श्री शिवकृपानंद स्वामीजी

स्रोत : महाशिवरात्रि प्रवचन 2014

Gurutattva®

मेरे जीवन में जो भी सुख मिला है, जो भी आनंद मिला है, जो भी अनुभूति हुई है, जो भी ज्ञान मिला है, जो भी मेरे को मिला है वो मैंने मेरे पास कभी रखा ही नहीं। वो ऑटोमेटिकली बाँट देता हूँ क्योंकि वो निसर्ग है। और सबको समान रूप से बँटता है, सबको समान रूप से मिलता है।

आप देखो ना, इस 45 दिनों के अंदर मैं एक अच्छे स्थिति में था, अच्छे अवस्था में था, अच्छे एकांत में था तो उस 45 दिनों में आपको भी वो अनुभूतियाँ हो रही थी, वो आपको अनुभव हो रहे थे उस एकांत के, उस अनुभूति के।

आपकी संवेदनशीलता इतनी बढ़ जाएगी, झाड़ आपसे बात करेंगे, फूल आपसे बात करेंगे। इतनी संवेदनशीलता आपकी खुद की बढ़ जाएगी। और आपके अंदर जो छुपी हुई प्रतिभा है, वह सब लोगों के बीच में रहकर के बाहर नहीं आ सकती।

विद्यार्थीनी: स्वामीजी ! हम घर पर तो सब प्रिपेरेशन करके जाते हैं एक्झाम के लिए, पर एक्झाम हॉल में जैसे ही एंटर होते हैं और पेपर हाथ में आता है, कुछ भी याद नहीं आता।

स्वामीजी: नहीं, उस समय पैर में से चप्पल निकाल दो और नंगे पैर जमीन को टच (स्पर्श) करो। जैसे हम जमीन को स्पर्श करते हैं न... क्या हुआ, भगवान ने हमको जब बनाया तब भूमि बनाई है। **भूमि हमको हर दफ़े बैलेंस करती है।**

लेकिन हमने भूमि से संबंध ही तोड़ लिया ना! घर में चप्पल पहनके घूमते हैं और बाहर जूते पहने घूमते हैं, तो नंगे पैर हमारा जमीन को स्पर्श ही नहीं होता। हमने जमीन को स्पर्श किया ना, तो ऑटोमॅटिकली क्या होगा, हमारे अंदर का टेंशन, हमारे अंदर का तनाव ऑटोमेटिकली कम हो जाएगा।

ऐसा कभी भी परीक्षा में टेंशन आया, तो पैर के चप्पल निकालकरके जमीन को स्पर्श करो। स्पर्श करोगे तो एकदम... एक्च्युअली, जमीन के अंदर एक गुरुत्वाकर्षण शक्ति है, वो आपके अंदर के सब टेंशन को, सारे तनाव को, सारे भय को, सब खींच लेगी। आप करके देखो पाँच मिनट, आपको बैलेंस लगेगा।

दूसरा, जैसे पढ़ते समय खूब अगर विचार आ रहे हैं, तो एक घी का दीपक जलाओ, तो ऑटोमॅटिकली क्या... मैंने क्यों दीपक जलाया? दीपक ना विचारों को कम करता है। तो हमको जो खूब ज्यादा विचार आ रहे हैं, वो विचार नहीं आएँगे।

पृथ्वी महाभूत

हमारा शरीर पंचतत्त्वों के सहयोग से बना है- पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश ।

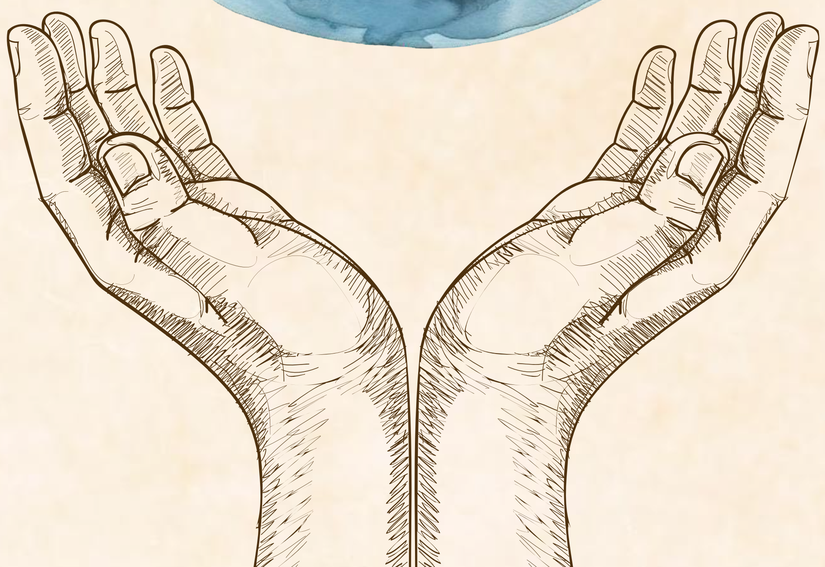

पृथ्वी तत्त्व के कारण हमें पवित्रता मिलती है। यह हमारे शरीर और चित्त को शुद्ध करता है। और हमें शारीरिक और मानसिक स्थिरता प्रदान करता है।

इसके लिए पहले पृथ्वी तत्त्व को एक महान शक्ति मानना होगा। और अपना संपूर्ण समर्पण उस पृथ्वी के तत्त्व को कर उस पृथ्वी तत्त्व से समरसता स्थापित करनी होगी। और इसके लिए प्रार्थना से अच्छा कोई मार्ग नहीं है।

लोग पृथ्वी के सान्निध्य में संतुलित होते हैं। पृथ्वी संतुलन और स्थिरता प्रदान करती है लेकिन उसके लिए पृथ्वी एक तत्त्व है यह ज्ञान होना चाहिए। पृथ्वी के सामने झुकते आना चाहिए। पृथ्वी के सामने आस्था के साथ समर्पण करते आना चाहिए।

तभी यह संभव हो सकता है। भूमि माता में गुरुत्वाकर्षण शक्ति होती है। जब हम प्रार्थना के द्वारा उस गुरुत्वाकर्षण शक्ति के साथ समरसता स्थापित करते हैं तो हमारे चित्त की शुद्धि हो जाती है।

भूमि माता चित्तशुद्धि करने में बड़ी सहायक होती है। जब चित्त सशक्त हो जाता है तो शरीर भी स्वस्थ हो जाता है।

भूमि किस के स्वामित्व में है उस स्वामित्व के ऊपर निर्भर करता है कि भूमि फलदायी है या नहीं। एक बंजर जमीन भी अगर किसी संत के स्वामित्व में आती है तो वही जमीन उपजाऊ बन जाएगी। लोगों का स्वामित्व जमीन की उपज शक्ति समाप्त कर रहा है क्योंकि स्वामी की ग्रहण करने की क्षमता नहीं है; तो वह भूमिस्वामी अपनी भूमि से भी ग्रहण नहीं कर सकता। और जब भूमिस्वामी ग्रहण नहीं करता है तो भूमि स्वयं तो कुछ दे नहीं सकती जब तक अतिरिक्त ग्रहण करने वाला न हो। इसलिए साधक को ध्यानसाधना करते समय स्थान का सदैव ध्यान रखना चाहिए।

पृथ्वी महाभूत

हमारा शरीर पंचतत्त्वों के सहयोग से बना है- पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश ।

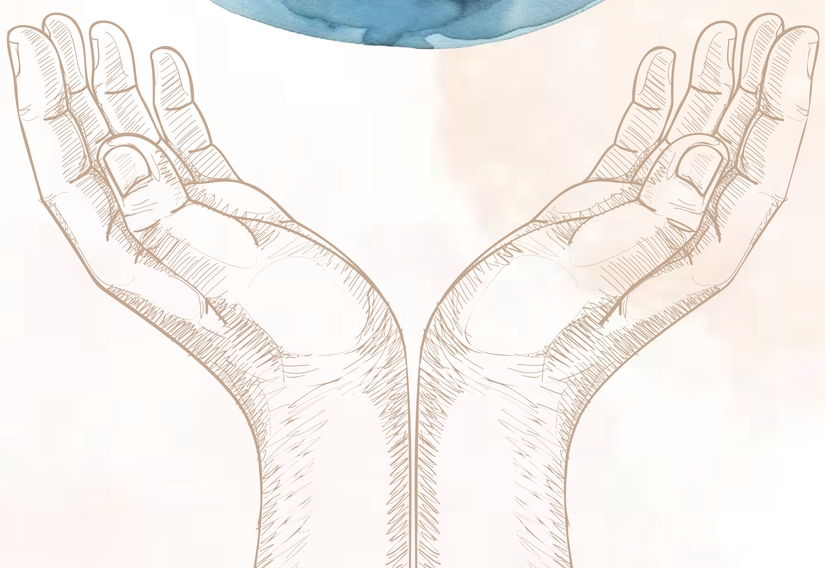

पृथ्वी तत्त्व के कारण हमें पवित्रता मिलती है। यह हमारे शरीर और चित्त को शुद्ध करता है। और हमें शारीरिक और मानसिक स्थिरता प्रदान करता है। इसके लिए पहले पृथ्वी तत्त्व को एक महान शक्ति मानना होगा। और अपना संपूर्ण समर्पण उस पृथ्वी के तत्त्व को कर उस पृथ्वी तत्त्व से समरसता स्थापित करनी होगी। और इसके लिए प्रार्थना से अच्छा कोई मार्ग नहीं है।

लोग पृथ्वी के सान्निध्य में संतुलित होते हैं। पृथ्वी संतुलन और स्थिरता प्रदान करती है लेकिन उसके लिए पृथ्वी एक तत्त्व है यह ज्ञान होना चाहिए। पृथ्वी के सामने झुकते आना चाहिए। पृथ्वी के सामने आस्था के साथ समर्पण करते आना चाहिए।

तभी यह संभव हो सकता है। भूमि माता में गुरुत्वाकर्षण शक्ति होती है। जब हम प्रार्थना के द्वारा उस गुरुत्वाकर्षण शक्ति के साथ समरसता स्थापित करते हैं तो हमारे चित्त की शुद्धि हो जाती है।

भूमि माता चित्तशुद्धि करने में बड़ी सहायक होती है। जब चित्त सशक्त हो जाता है तो शरीर भी स्वस्थ हो जाता है।

भूमि किस के स्वामित्व में है उस स्वामित्व के ऊपर निर्भर करता है कि भूमि फलदायी है या नहीं। एक बंजर जमीन भी अगर किसी संत के स्वामित्व में आती है तो वही जमीन उपजाऊ बन जाएगी। लोगों का स्वामित्व जमीन की उपज शक्ति समाप्त कर रहा है क्योंकि स्वामी की ग्रहण करने की क्षमता नहीं है; तो वह भूमिस्वामी अपनी भूमि से भी ग्रहण नहीं कर सकता। और जब भूमिस्वामी ग्रहण नहीं करता है तो भूमि स्वयं तो कुछ दे नहीं सकती जब तक अतिरिक्त ग्रहण करने वाला न हो। इसलिए साधक को ध्यानसाधना करते समय स्थान का सदैव ध्यान रखना चाहिए।

पृथ्वी महाभूत

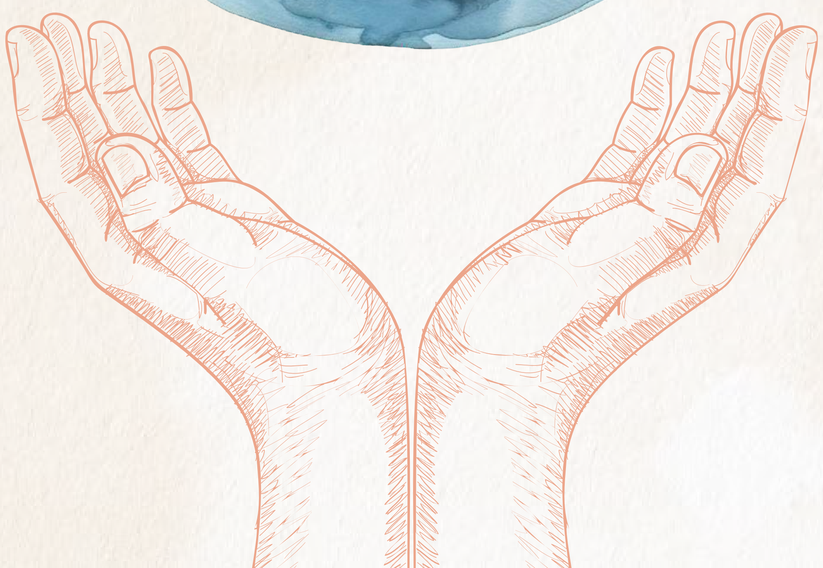

ध्यान किसी भी स्थान पर बैठकर नहीं करना चाहिए। इसीलिए सदैव सद्गुरु-सान्निध्य में ध्यान साधना सर्वश्रेष्ठ होती है। क्योंकि सद्गुरु के प्रभाव के कारण वह स्थान पवित्र, शुद्ध एवं अधिक ग्रहण करने की क्षमता वाला हो जाता है। और ऐसे स्थान पर बैठकर ध्यानसाधना करना सदैव अत्यंत उपयोगी सिद्ध होता है।

पृथ्वी तत्त्व से स्वास्थ्य लाभ का उदाहरण: mud treatment

विधि विधान के दौरान मिट्टी के बर्तन का उपयोग

प्रयोगः तुम सोचो - तुम तुम्हारी माँ की गोद में ही बैठे हो। वैसे ही निश्चिंतता से, अपनेपन से धरती के ऊपर बैठो और पूर्ण समर्पित होकर आप धरती से प्रार्थना करो कि मैं आप की ओर संपूर्ण समर्पित हूँ। मेरे चित्त को शुद्ध व सशक्त करने की कृपा करें। तुम महसूस करोगे तुम्हारे भीतर की खराब ऊर्जा के स्पंदन होना चालु हो गए। और तुम्हारा चित्त सशक्त व शुद्ध हो जाएगा।

जल महाभूत

जल सर्वश्रेष्ठ माध्यम हो सकता है अपने भाव को अभिव्यक्त करने का। इसीलिए पानी से सूर्य को अर्घ्य दिया जाता है। समर्पण करने के लिए पानी सर्वश्रेष्ठ माध्यम है।
पानी की सामूहिकता के जब कभी प्रथम दर्शन करते हैं, दर्शन का पहला प्रभाव अच्छा लगता है। यह अच्छा लगना दर्शन मात्र से होता है।

पानी केवल शरीर को शुद्ध नहीं करता बल्कि आत्मा को भी शुद्ध करता है, चित्त को भी शुद्ध करता है। और आध्यात्मिक प्रगति के लिए चित्तशुद्धि अत्यंत आवश्यक है।

चैतन्य स्नान : इस जगत में अधिक तो पानी ही है। हमारे शरीर में भी 70% पानी ही है। तो पानी पर प्रभाव तो होगा ही। और एक शरीर से दूसरे शरीर तक संवेदनाएँ पहुँचाने का पानी एक अच्छा माध्यम हो सकता है। इसीलिए हमारे देश में स्नान करते समय पवित्र नदियों का नाम लेने की प्रथा है। नहाते समय हम जो नाम लेंगे उस नाम का प्रभाव तो हमारे शरीर पर पड़ेगा ही। इसीलिए नहाते हैं सामान्य पानी से और नाम लेते हैं पवित्र महान नदियों का। ऐसा करने से पवित्र नदियों का चैतन्य उस सामान्य पानी को भी मिलता है। और अच्छे चैतन्य के कारण बुरी ऊर्जा का जो प्रभाव शरीर पर पड़ा होता है वह भी दूर होता है और शरीर अच्छी ऊर्जा से युक्त हो जाता है।

जल ही जीवन है : पानी को अभिमंत्रित करने की परंपरा बहुत पुरानी ऋषि-परंपरा है। ऋषिजन प्रायः किसी को आशीर्वादित करने के लिए या किसी को शाप देने के लिए भी पानी को अभिमंत्रित कर संकल्प करते थे। कोई संकल्प भी किया जाता है तो वह भी पानी को हाथ में रखकर ही किया जाता है। पानी मनुष्य के जीवन से प्रत्येक क्षण जुड़ा हुआ है। मनुष्य ही नहीं पशु-पक्षी, वनस्पति सभी का जीवन पानी से जुड़ा हुआ है।

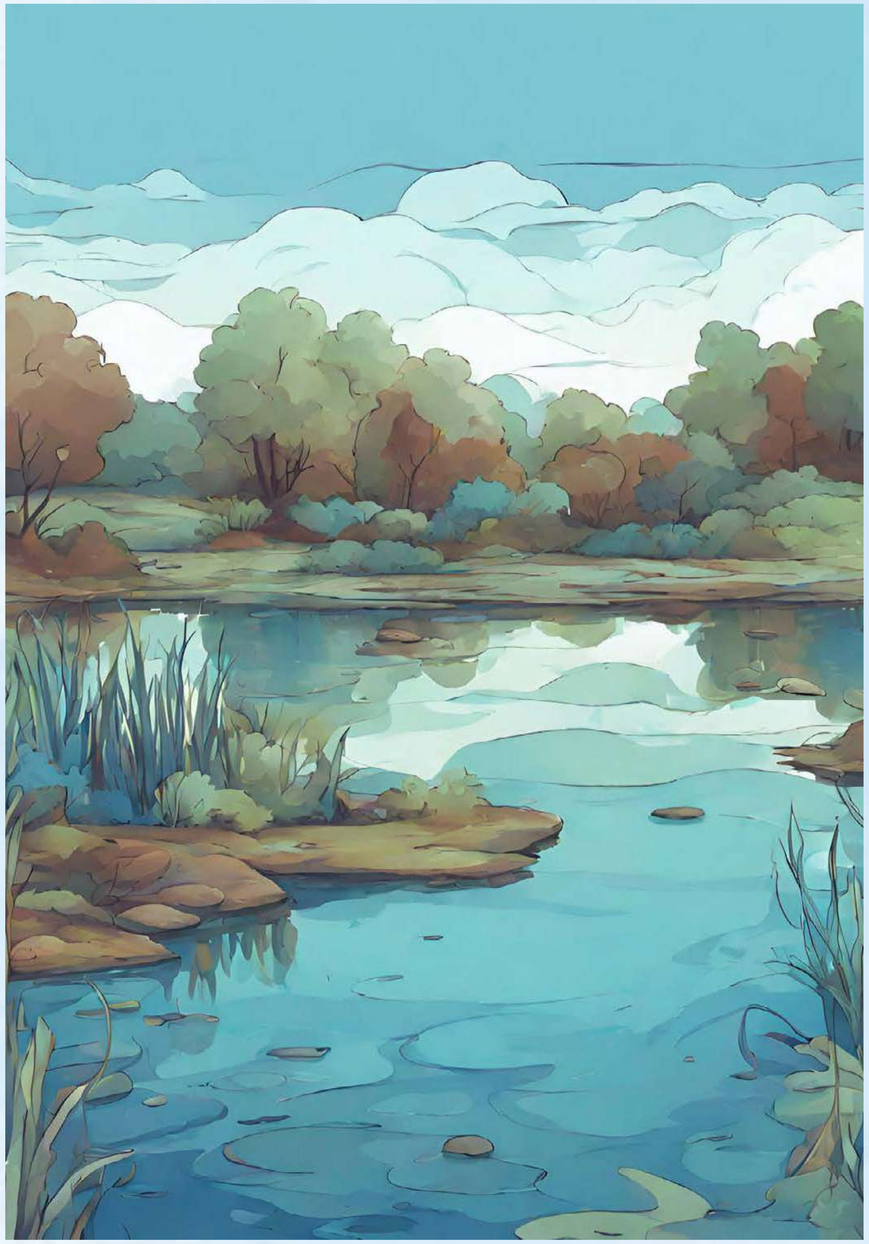

जल महाभूत

तालाब का पानी :

अगर हम कभी किसी विशाल तालाब के पास जाते हैं तो हमें उसका चैतन्य आज्ञा चक्र और हृदय चक्र पर अनुभव होता है। यानी हम कभी किसी विशाल तालाब के किनारे पर जाएँगे तो...

- हमारा गुस्सा कम होगा
- चित्त का असंतुलन हुआ होगा वह ठीक होगा
- विचारों की तीव्रता कम होगी
- रक्तप्रवाह सामान्य होगा
- हमारे शरीर में अगर कोई भय की भावना रही हो तो अच्छा लगेगा, सुरक्षा का भाव जागृत होगा
- मन एकदम शांत होगा, मन की चंचलता कम होगी, भूतकाल के विचार कम होंगे, मन वर्तमान में आएगा
- आसपास के वातावरण का चैतन्य आप ग्रहण कर सकेंगे।

प्रयोगः पानी की सामूहिकता से सान्निध्य की दूसरी पादान अगर आप वहाँ पर 20 मिनट खड़े रहेंगे या बैठें तो उसका प्रभाव आपके मन पर भी होना प्रारम्भ हो जाएगा। मन के दूषित विचारों के बाहर निकलने के लिए 20 मिनट की अवधि आवश्यक होती है। क्योंकि 20 मिनट के बाद ही यह प्रक्रिया होनी प्रारम्भ होती है। शुद्धिकरण की प्रक्रिया से यह महसूस होता है - जो अनावश्यक विचार हम कर रहे थे वे कम हो गए। और मन को भी प्रसन्न लगने लग गया है। भूतकाल के जो विचार बार-बार आ रहे थे वे भी कम हो गए हैं। मन जो अस्थिर होकर भटक रहा था वह भी कम भटक रहा है। एक प्रकार की शांति का अनुभव करोगे।

Gurutattva®

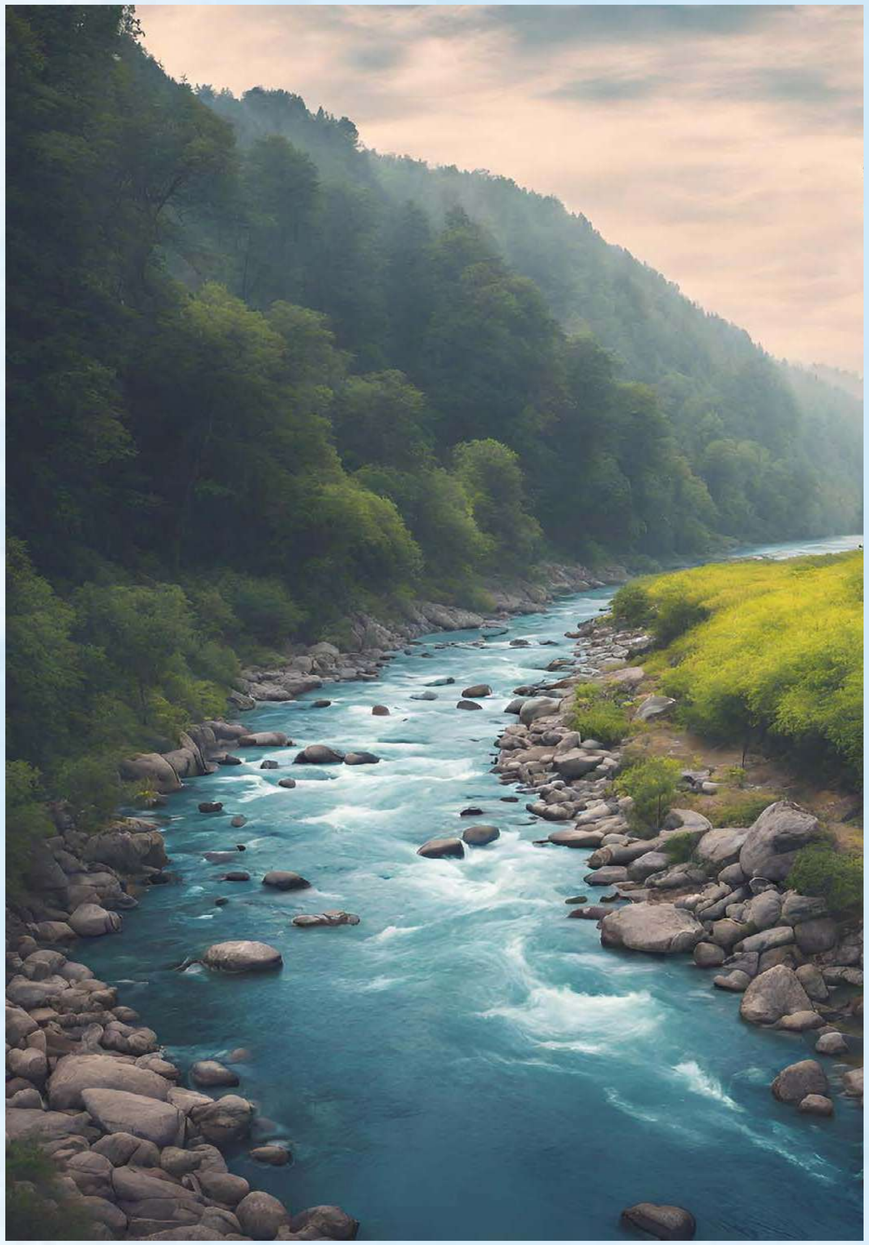

जल महाभूत

नदी का पानी : नदी के किनारे पर बैठकर साधना करने से इसलिए लाभ होता है क्योंकि नदी के पानी की एक प्रकार की गति होती है। वह आगे और आगे बढ़ता ही रहता है। और एक सन्थ (मंद) गति एक साथ बढ़ता है।
साधना के लिए नदी का किनारा सबसे अच्छा स्थानः ध्यान करने वाले तपस्वी उस सन्थ गति के साथ अपने चित्त को जोड़ लेते हैं। और यह कार्य वे नदी की आवाज के साथ करते हैं। और नदी की गति के साथ चित्त जोड़ लेने पर चित्त को एक ही दिशा में चलने की चालना मिलती है। और जब चित्त सतत एक ही दिशा में चलता है तो निर्विचारिता की स्थिति उसे ऐसे ही प्राप्त हो जाती है। और चित्त का स्नान होने से चित्त का मैल दूर हो जाता है। और चित्तशुद्धि हो जाती है। चंचल चित्त को एक प्रकार की स्थिरता मिलती है। इसीलिए ध्यानसाधना के लिए नदी का किनारा सबसे अच्छा स्थान माना जाता है।

नाभि चक्र के दोष: हमारे नाभि चक्र में दो प्रकार के दोष होते हैं एक तो ईर्ष्या और दूसरा लोभ। इन दो दोषों से ही नाभि चक्र की समस्याओं का निवारण होता है। ये दोनों दोष भी नदी के किनारे पर दूर हो सकते हैं।

नदी का पानी बहता हुआ होने के कारण वह अपने साथ अनेक स्थानो का चैतन्य लेकर आता रहता है। और पानी का स्वभाव है अग्नि को शांत करना। हमारे शरीर में भी जो विचारों की अग्नि जल रही होती है, हमारे भीतर जो अतृप्ति की अग्नि जल रही होती है उसे भी वह शांत करता है। इस अग्नि के शांत होने से हमें भी शांति महसूस होती है।
नदी का सतत समर्पण से समुद्र को मिलने का भाव नदी किनारे साधनारत तपस्वियों को सदैव प्रेरणा देता रहता है।

जल महाभूत

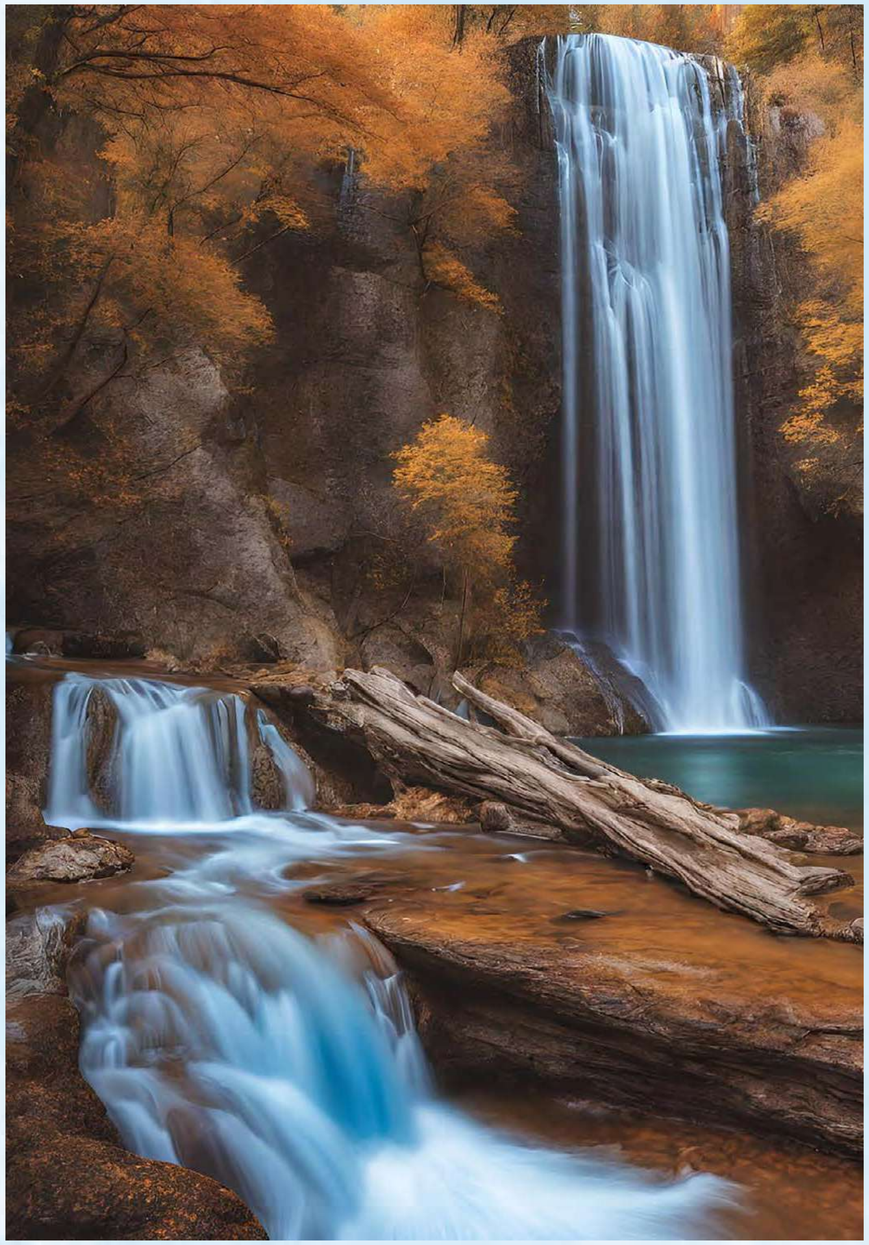

झरने का पानी : अगर हम किसी बड़े झरने के करीब जाते हैं तो वह जहाँ से गिरता है उसकी ऊँचाई और वह जहाँ गिरता है वह स्थान दोनों मिलकर एक आवाज का निर्माण करते हैं। और इस आवाज से आसपास का सारा वातावरण उत्साह और प्रसन्नता से भर जाता है। उसके पास जाने से ही निर्विचारिता की स्थिति प्राप्त हो जाती है।

बड़े झरने का प्रभाव स्वाधिष्ठान चक्र पर अधिक होता है। यह शरीर और चित्त के शुद्धिकरण के लिए अच्छा होता है। असंतुलित मनुष्य को संतुलित करता है। छोटे झरनों के सान्निध्य में नाद तो प्राप्त होता ही है, और शोर भी नहीं होता है।

जल महाभूत

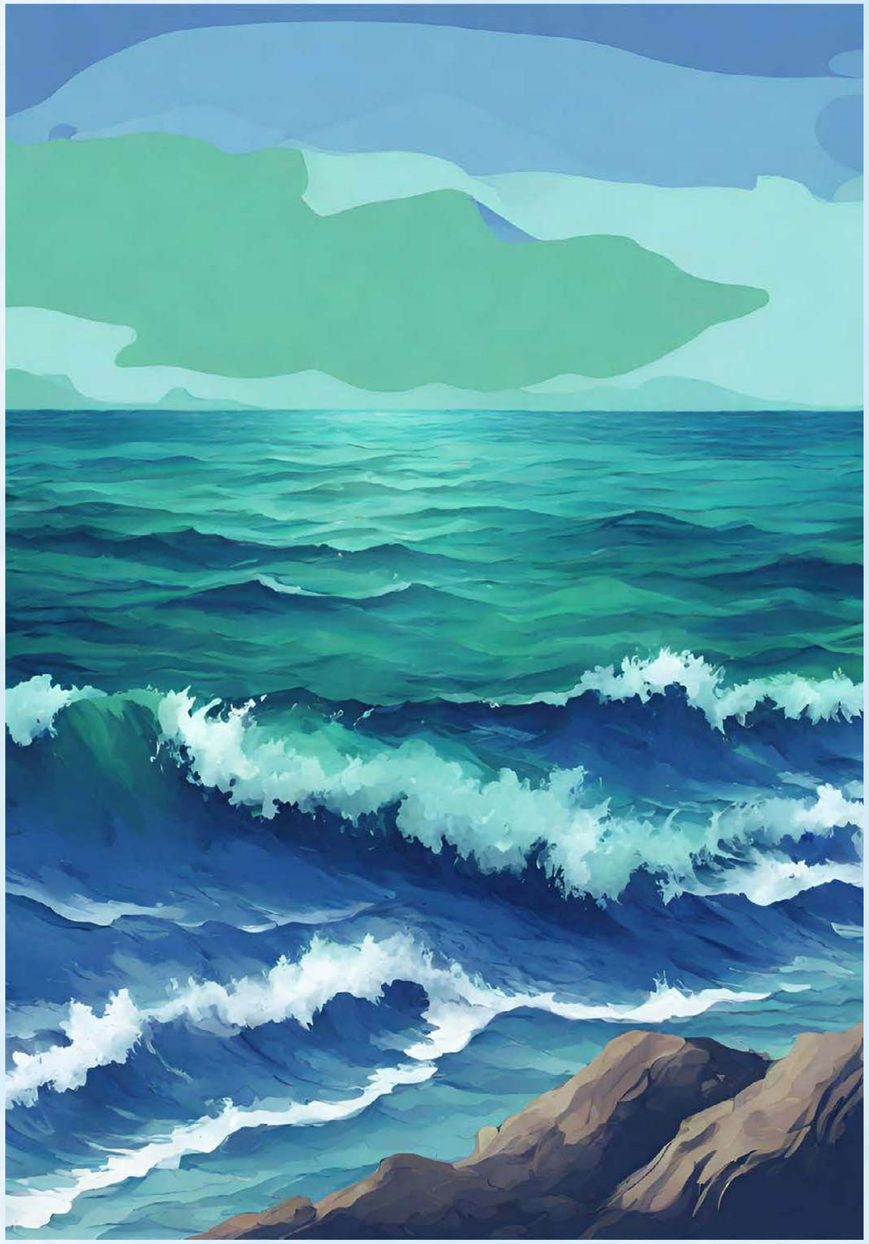

समुद्र का पानी : सबसे बड़ी सामूहिक शक्ति लिए होता है समुद्र। जलतत्त्व का अंतिम ठिकाना समुद्र ही होता है। क्योंकि समुद्रों का पानी सूर्य की गरमी से भाप बनकर आकाश में चला जाता है। और बादल में वर्षा के रूप में फिर इस धरती पर बरसता है। और प्रकृति का यह चक्र चलता ही रहता है। इस प्रक्रिया में प्रकृति एक चमत्कार भी करती है। जब समुद्र का पानी भाप बनकर आकाश में जाता है और बरसात की बूंदों के रूप में धरती पर बरसता है तो वह मीठा हो जाता है। यानी प्रकृति को समुद्र भले ही अपने स्वभाव के अनुसार खारा पानी दे पर प्रकृति भी अपने स्वभाव अनुसार समुद्र को पानी शुद्ध कर, पवित्र कर, मीठा बनाकर ही वापस देती है।

इस प्रकृति में ही शिवतत्त्व छुपा है, गुरुतत्त्व छुपा है जिसे आप खारा पानी दो तो वह उस जहर को स्वयं पीता है और अमृत रुपी मीठा पानी ही वापस करता है।

अग्नि महाभूत

मनुष्य का शरीर पंचतत्त्वों के द्वारा निर्मित होता है। उनमें एक अग्नि तत्त्व होता है और मनुष्य के शरीर में इसका बड़ा महत्त्व है। अग्नि का विचारों के साथ संबंध होता है। अग्नि तत्त्व कम हो जाने पर मनुष्य को विचार अधिक आते हैं।

ईश्वर की उपासना में मनुष्य को विचार न आए इसीलिए प्रत्येक उपासना में अग्नि किसी ना किसी रूप में विद्यमान होती ही है। अग्नि एक पवित्र तत्त्व है।

यज्ञशाला में अग्नि के सान्निध्य में मंत्र और अधिक प्रभावशाली हो जाते हैं। अग्नि की विशेषता है - यह वातावरण को शुद्ध करती है, मनुष्य को निर्विचार करती है और अग्नि से निकलने वाला प्रकाश वातावरण में मंत्र शक्ति के प्रभाव को फैलाने का कार्य करता है। इसीलिए यज्ञशाला में बोले गए मंत्र अधिक प्रभावशाली हो जाते है।

मृत्यु के बाद भी अग्नि का मनुष्य के दाह-संस्कार में बड़ा महत्त्व होता है। मनुष्य का दाह-संस्कार इसीलिए किया जाता है कि मनुष्य की आत्मा शरीर के मोह से मुक्त हो सके। इसीलिए मनुष्य के शरीर का अग्नि में अंतिम संस्कार किया जाता है।

प्रयोगः सूर्योदय एवं प्रकाश के अन्य स्त्रोत जैसे कि मोमबत्ती, दीया आदि के सामने देखने से विचार कम आते हैं। अग्नि तत्त्व से जुड़ने के लिए अच्छे स्वास्थ्य के लिए सूर्यनमस्कार कर सकते है।

वायु महाभूत

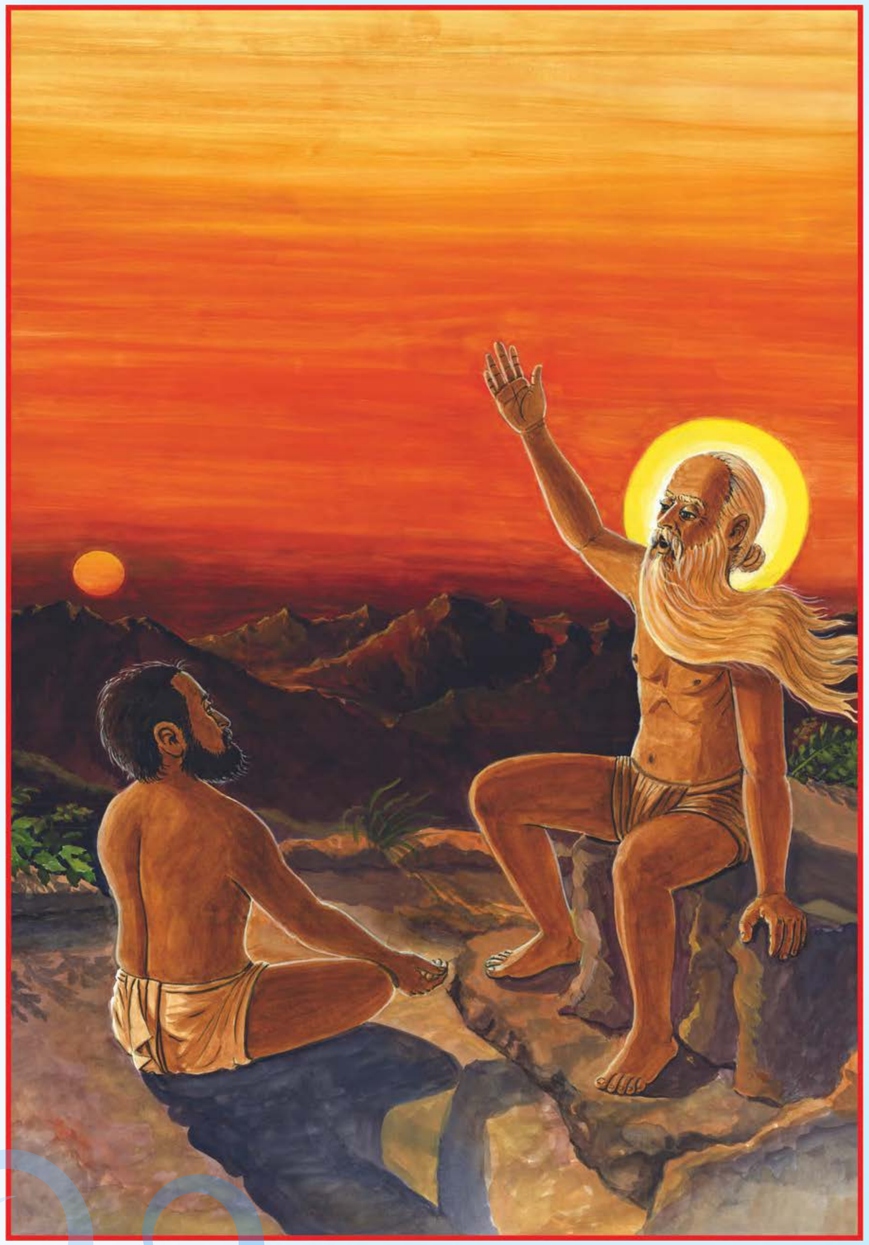

वायु में प्राणवायु होता है जो हमारे अस्तित्व के लिए जरूरी है। नकारात्मक विचार पर्यावरण को दूषित करता है, विविध प्रसारण माध्यम जैसे टेलिविजन, रेडियो, अखबार आदि बड़े पैमाने पर नकारात्मक समाचार प्रसारित करते हैं। यह हमारे दिमाग में असलामती की भावना पैदा करता है। गहरी सांस लेने से शरीर में प्राणवायु की मात्रा बढ़ती है। जिससे आत्मविश्वास बढ़ता है।

प्रयोगः

प्रातःकाल एवं सायंकाल में कुदरती वातावरण में चलने से हमें प्रसन्नता एवं हलकापन महसूस होता है।

आकाश महाभूत

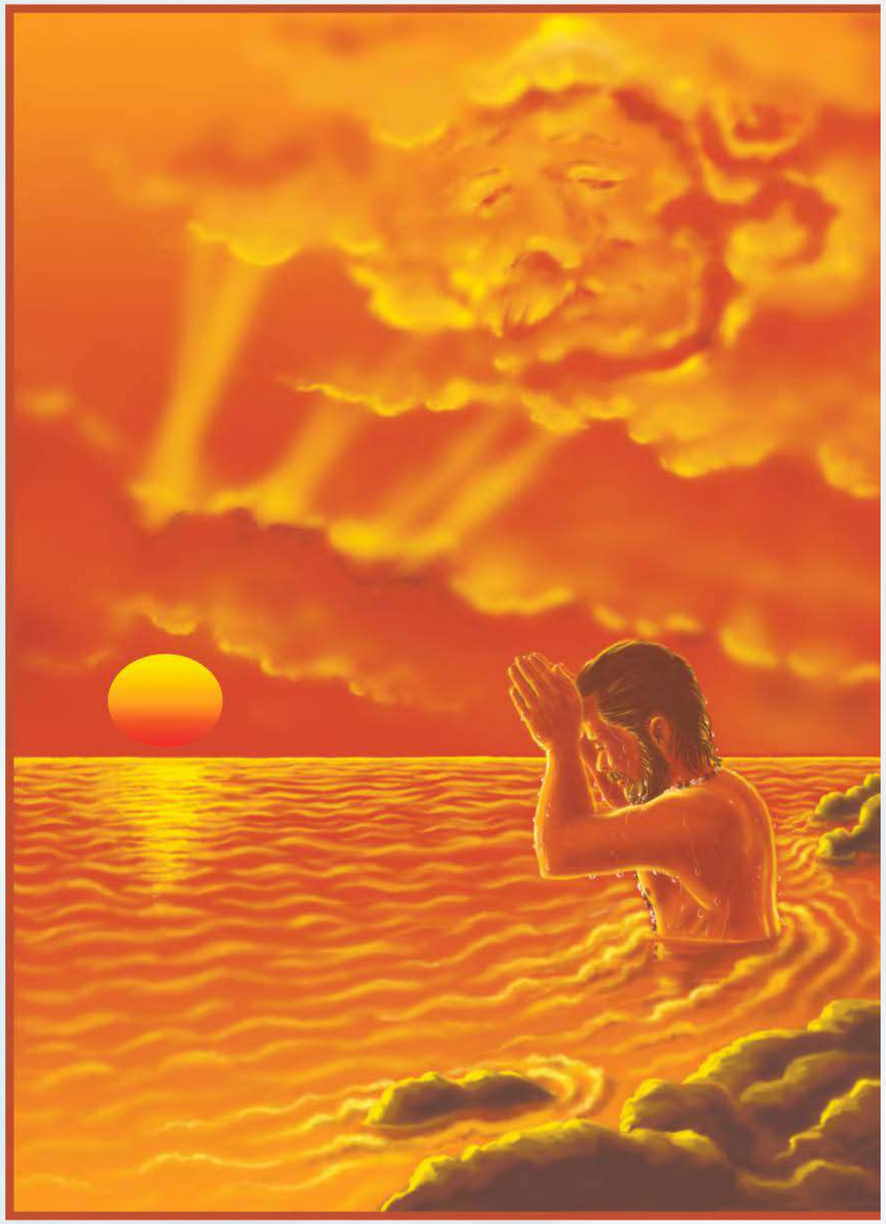

प्रयोगः पहले शांत चित्त होकर बैठो और आकाश की ओर देखो। और सूर्यास्त के बाद जो लालिमा आकाश में छा जाती है उसका अध्ययन करो। सूर्यास्त के बाद आकाश में जो विभिन्न छटाएँ छा जाती हैं उनका अध्ययन करो। लगातार अध्ययन करो। फिर बादल कहाँ से आ रहा है, वे बादल कहाँ जा रहे हैं उसका अवलोकन करो। बादल किस रंग के हैं वह देखो। बादलों से क्या आकृतियाँ निर्माण हो रही हैं उसका निरीक्षण करो। यह आकाश-दर्शन की एक सतत साधना होती है। यह अभ्यास करते करते हम सीख सकते है। आकाश में होने वाली एक-एक घटना का निरीक्षण करना है। जो जो बदलाव हो रहा है उनका ध्यान रखना है।

धीरे-धीरे अपने चित्त को और गहराई में उतारना है। और उन बादलों के पार क्या है वह अनुभव करना है क्योंकि वह दृष्टि से परे है और बादलों से परे देखने पर जो अनुभूति हो रही है अब उस अनुभूति को पकड़ो। उस पर चित्त रखो और धीरे-धीरे उस अनुभूति को अपनी आँखों में, अपने भीतर भर लो। और आँखें बंद कर लो। और अपने भीतर के आकाश तत्त्व को अनुभव करो। और भीतर क्या अनुभूतियाँ अनुभव हो रही हैं उसका अनुभव करो। और धीरे-धीरे शून्य की स्थिति निर्मित हो जाएगी और चित्त में से आकाश कब हट गया पता भी न चलेगा। और चित्त निश्चित चेतना के साथ जुड़ जाएगा। क्योंकि अंदर की चेतना और बाहर की चेतना एक हो जाएगी।

और शरीर का जो मैं का अहंकार है वह स्वयं ही समाप्त हो जाएगा। आपका निजी अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। यह आकाश-दर्शन की साधना होती है।

- परम पूज्य श्री शिवकृपानंद स्वामीजी

स्रोत : 'हिमालय का समर्पण योग' ग्रंथ भाग 1 और 4

परम पूज्या गुरुमाँ ने चित्त को खाली करने के उपाय स्वरूप पौधों के साथ बात करने के बारे में मकरसंक्रांति के प्रवचन में बताया है। उन्होंने बताया कि पौधे मुँह से नहीं अपितु मौन रहकर बोलते हैं। उनके साथ नकारात्मक-सकारात्मक सब बातें करें। वृक्ष को अपना मित्र बनाएँ, उसके साथ समरस होकर हम धीरे-धीरे खाली हो सकते हैं। उसके साथ रेपो डेवेलप करें।

गुरुदेव के प्रकृति के प्रयोग

पानी के झरने के सान्निध्य में...

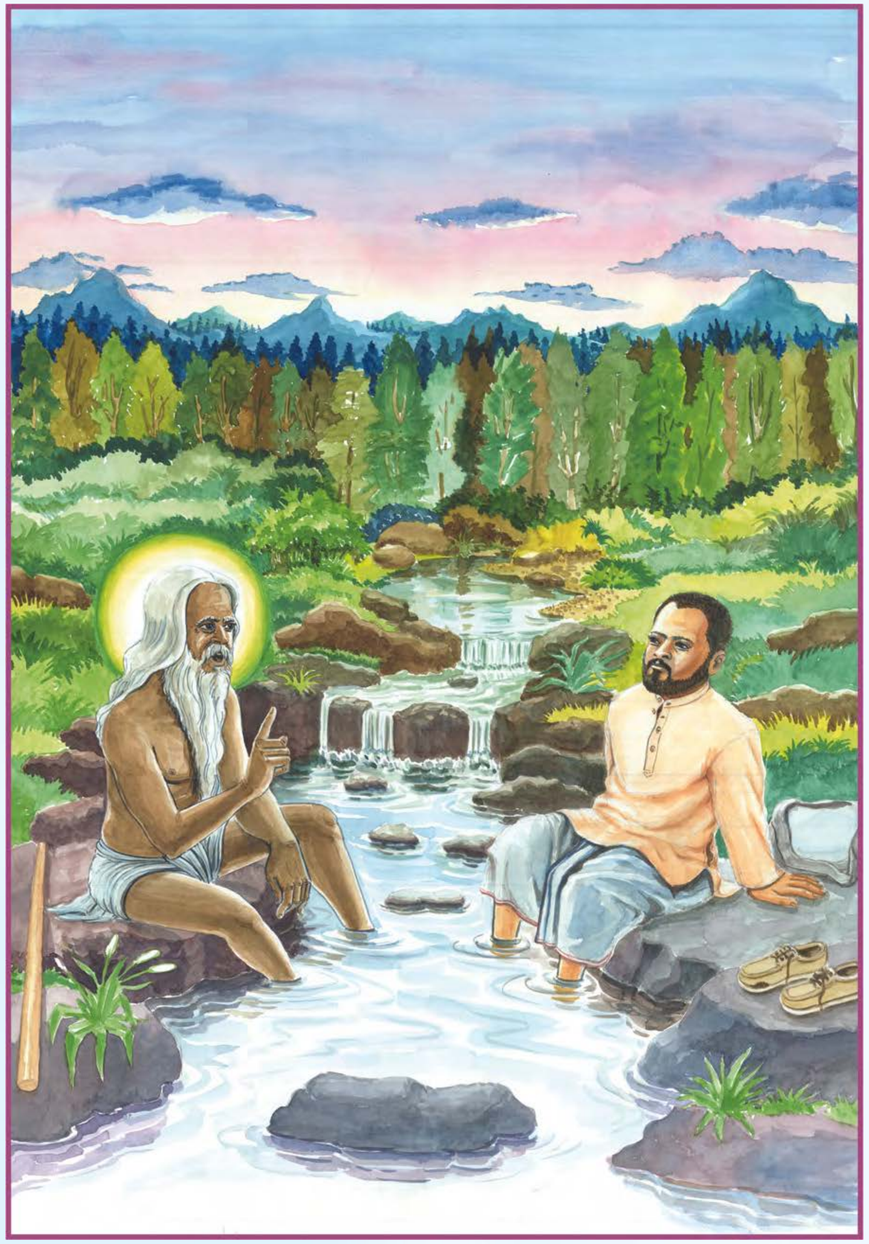

पहले आठ-दस दिन उन्होंने मुझे वहाँ की प्रकृति के साथ जुड़ना सिखाया। वे कहते - यह झरने का पानी बह रहा है, उसे देखो, गौर से देखो और देखते ही रहो। वह एक निश्चित व्यवस्था के अधीन बह रहा है। वह पहले कैसे गिरता है, बाद में कैसे गिरता है और बाद में किस क्रम में गिरता है, उसका एकाग्रता से अध्ययन करो। उसमें प्रकृति एक संदेश दे रही है, उसे समझो। उस पानी के प्रवाह में एक-समान ताल है, उस ताल के उपर अपना चित्त रखो। उस झरने के बहने में एक सुर है, उसे पहचानो। उस संगीत को सुनो, उसके संदेश को सुनो और उस बहनेवाले पानी के झारने की आवाज को अपने भीतर महसूस करो।

तो तुम्हें गहराई में उतरने पर लगेगा वह झरना व पानी बाहर नहीं, तुम्हारे भीतर ही कहीं बह रहा है। उस आवाज का तुम्हारे मन पर क्या प्रभाव पड़ता है, वह अनुभव करो। अब विचार करो यह पानी का उद्गम कहाँ से हुआ होगा और यह पानी किस मार्ग से आया होगा ? और कौन-कौन से जंगलों से आया होगा ? अब यह पानी आगे किस-किस मार्ग से जाएगा? और उसका अंतिम लक्ष्य क्या है? तो जानोगे, उसका ही नहीं, पानी की प्रत्येक बूँद का अंतिम लक्ष्य सागर ही है। प्रत्येक बूँद को अंततः सागर में जाकर ही मिलना है।

अब धीरे-धीरे उस पानी को तुमने पिया है, यह सोचो और उस पानी का स्वाद जानने का प्रयत्न करो। और तुम देखोगे कि पानी को पिए बिना ही तुम्हें पानी का स्वाद मालूम पड़ रहा है। अब विचार करो कि तुम पानी में कूद गए हो और उस पानी के भीतर कूदकर तुम नहा रहे हो। अब पानी का स्पर्श और सान्निध्य भी महसूस होने लगेगा। अब महसूस करो, तुम्हें अब कैसा लग रहा है।

गुरुदेव के प्रकृति के प्रयोग

पानी के झरने के सान्निध्य में...

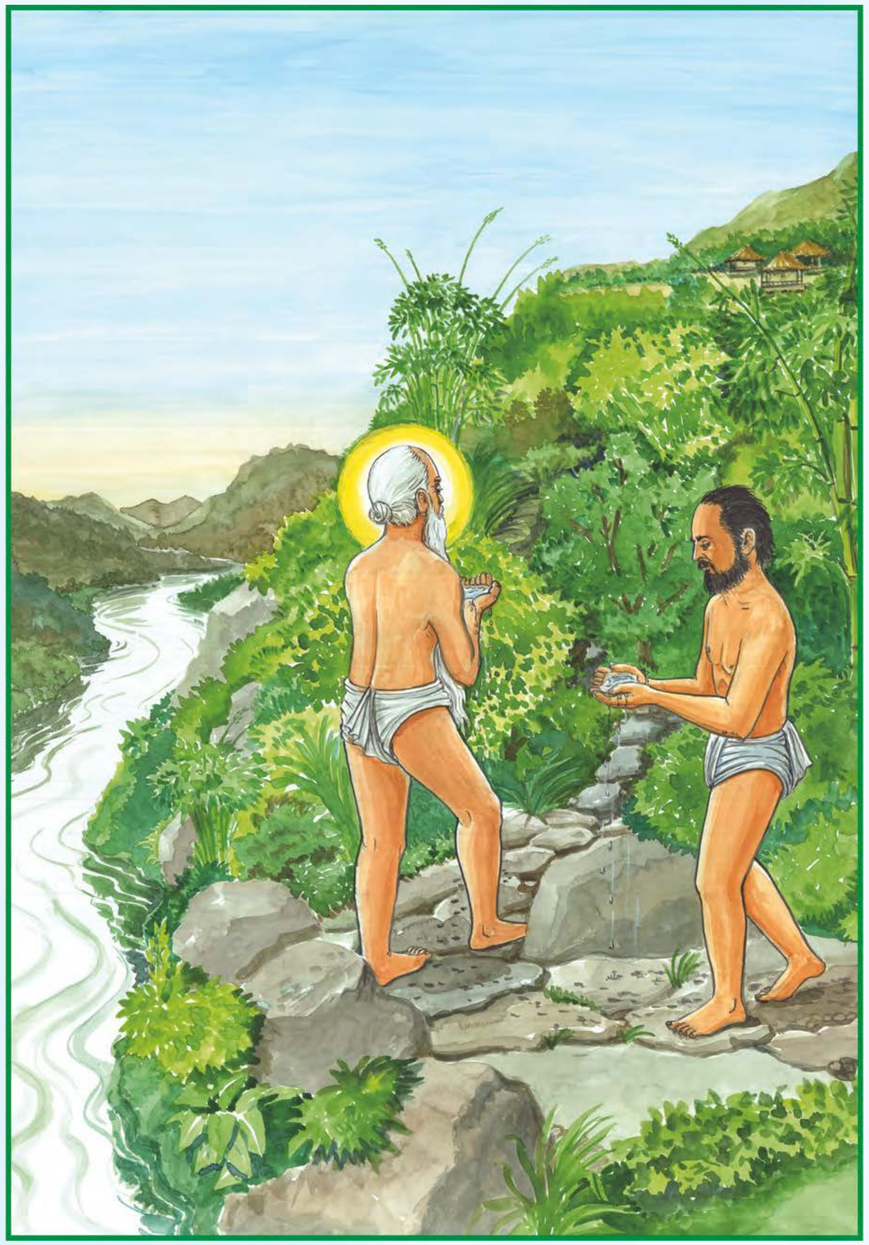

पानी की अनुभूति को सिर पर अनुभव करो, गर्दन पर अनुभव करो, छाती पर अनुभव करो, पैरों पर अनुभव करो और महसूस करो पानी उपर से शरीर में घुसकर नीचे, पैर के तलुवे से निकल रहा है।

इस प्रकार से काफी दिनों तक उन्होंने मेरा चित्त उस पानी के प्रवाह पर रखा था। और इन दिनों में मैंने महसूस किया मुझे विचार आने बंद हो गए हैं। मैं धीरे-धीरे बाकी जगत् को भूल गया और एक पानी का झरना ही मेरा संपूर्ण जगत् हो गया। और यह झरना बह रहा था। रोज नए-नए पानी के कणों के साथ चित्त की एकाग्रता होने से चित्त धीरे-धीरे शुद्ध होता चला जा रहा था।

- परम पूज्य श्री शिवकृपानंद स्वामीजी
स्रोत : 'हिमालय का समर्पण योग' ग्रंथ भाग -1

गुरुदेव के प्रकृति के प्रयोग

वृक्ष के सान्निध्य में

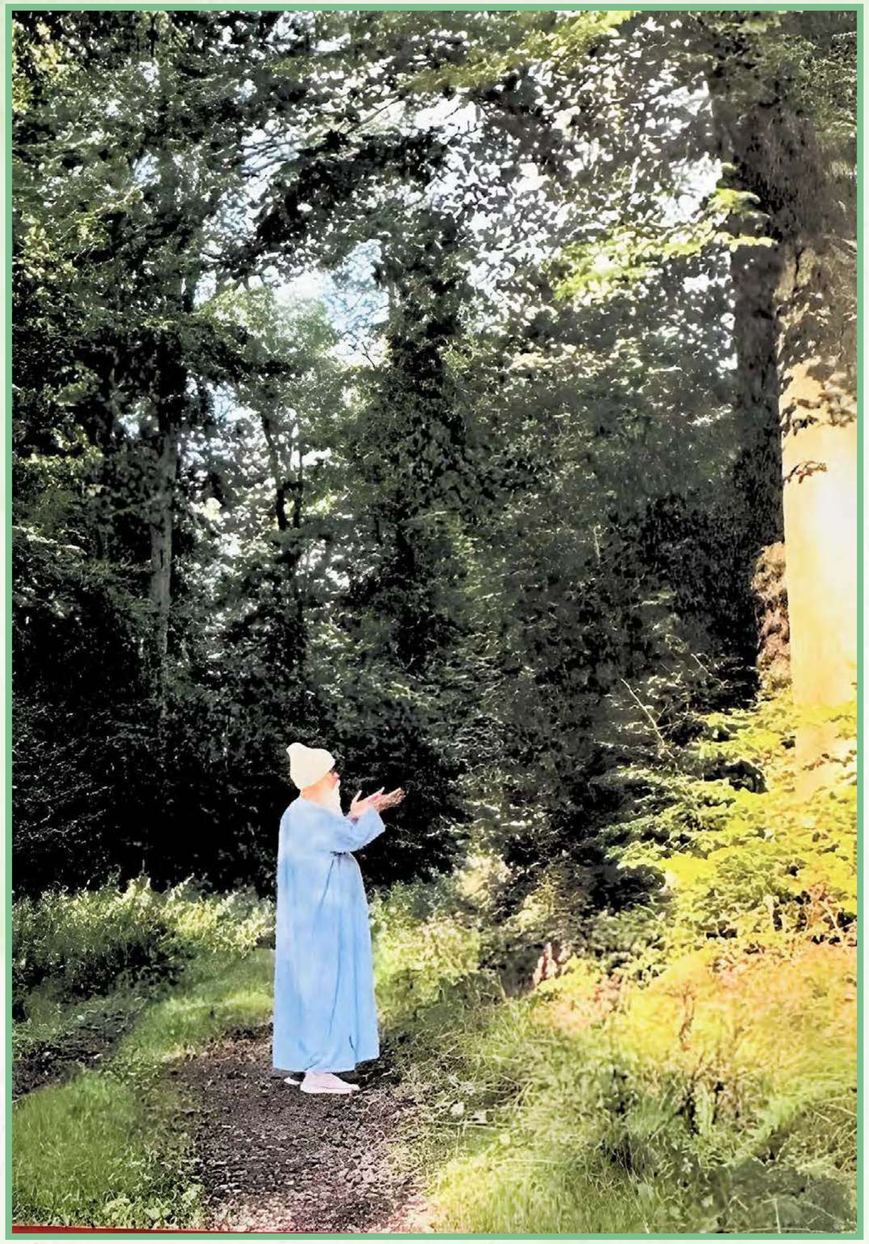

कुछ दिनों के बाद गुरुदेव जंगल में कंद-मूल तोड़ने जाते थे, तो मुझे भी साथ लेकर जाते। अलग- अलग वृक्षों के बारे में जानकारी देते थे। उस वृक्ष की विशेषताएँ बताते थे.... उनके साथ वृक्षों की जानकारी लेने के कारण मैं प्रकृति के ज्यादा निकट जा सका, प्रकृति को ज्यादा समझ सका।

एक वृक्ष प्रकृति के साथ जुड़ा हुआ है। इसीलिए साधक के लिए प्रकृति को समझाने के लिए एक वृक्ष को समझाना अत्यन्त आवश्यक है। एक वृक्ष में प्रकृति का सारा रहस्य छुपा हुआ है।

एक टहनी को अपनी ऊर्जा की एक सीमा तक आवश्यकता है और उस निश्चित सीमा के बाद उस ऊर्जा को बाँट कर ही प्रसन्नता लगती है। और छोटी-छोटी टहनियों और पत्तों में ऊर्जा बाँटकर वह अपने निजी संबंध को विस्तृत कर लेती है। उसके साथ इतने ग्रहण करनेवाले हो जाते हैं यानि इतने ग्रहण करनेवाले उसे माध्यम के रूप में लेते हैं। और सेंकड़ों छोटी-छोटी टहनियाँ और हजारों पत्ते जिस टहनी को माध्यम बनाकर उससे जीवनशक्ति ग्रहण करते हो तो वृक्ष की आवश्यकता हो जाती है कि उस टहनी तक जीवनऊर्जा पहुँचाए ही। क्योंकि उस टहनी पर सेंकड़ों टहनियों का और हजारो पत्तों का जीवन निर्भर करता है।

सदैव साधक को भी परमात्मा रुपी वृक्ष की वह टहनी बनना चाहिए जिस टहनी पर सेंकड़ो छोटी टहनियाँ और हजारो पत्ते निर्भर है। परमात्मा से प्राप्त ज्ञान को आपके माध्यम से हजारो लोगों तक पहुँचाना चाहिए।

- परम पूज्य श्री शिवकृपानंद स्वामीजी

स्त्रोत : 'हिमालय का समर्पण योग' ग्रंथ भाग -1

गुरुदेव के प्रकृति के प्रयोग

भूमिमाता के सान्निध्य में

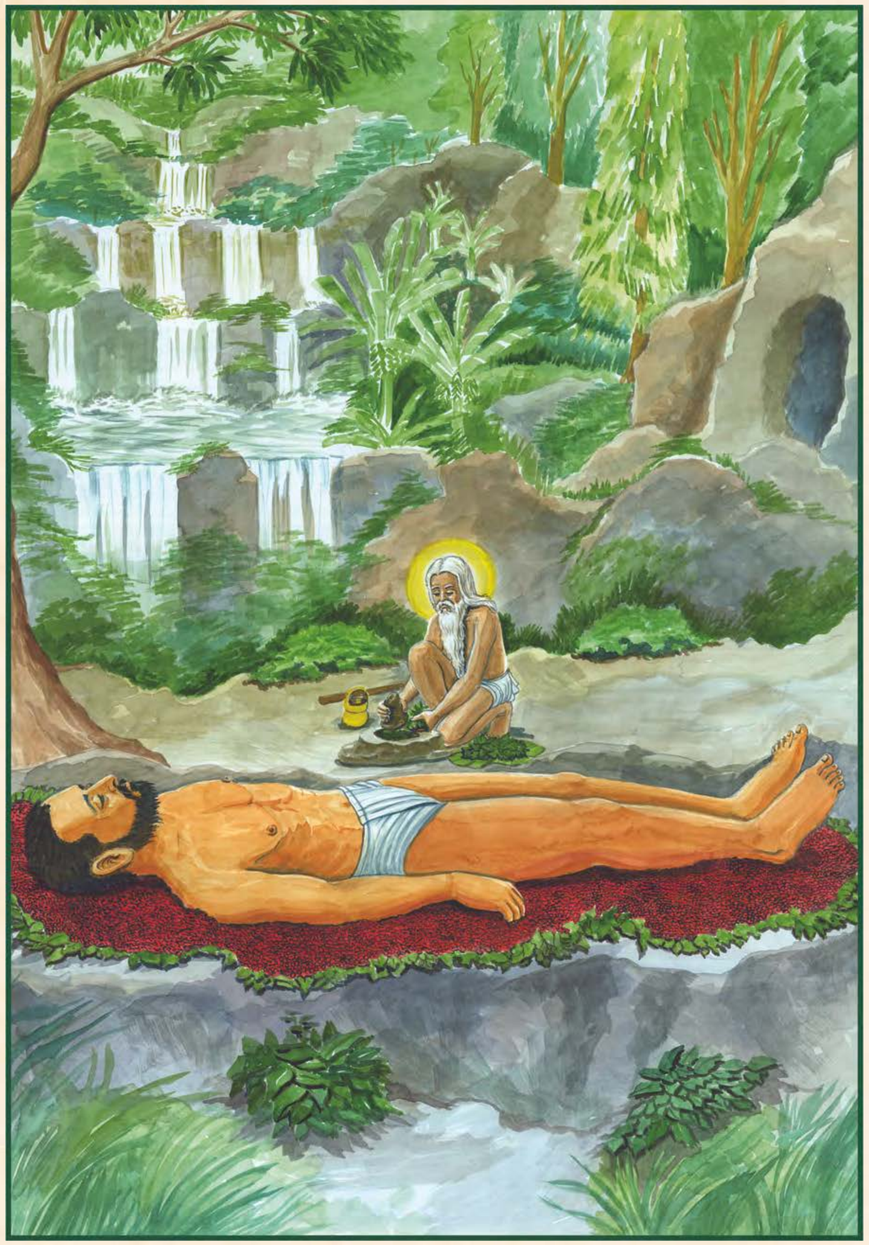

भूमिमाता चित्तशुद्धि करने में बड़ी सहायक होती है। जब चित्त सशक्त हो जाता है, तो शरीर भी स्वस्थ हो जाता है। भूमि की गुरुत्वाकर्षण शक्ति चित्त को और शरीर को संतुलन में लाने का कार्य करती है, बशर्ते हम उस संतुलन के लिए तैयार हो जाए। प्राकृतिक शक्तियों का उपयोग स्वेच्छा से किया जा सकता है। जबरदस्ती के साथ किसी को भी प्रकृति के साथ जोड़ा नहीं जा सकता है।

एक दिन सुबह गुरुदेव स्वयं जमीन के ऊपर बैठे थे और मुझे भी जमीन पर बिठाया और उन्होंने कहा, "तुम सोचो - तुम तुम्हारी माँ की गोद में ही बैठे हो। वैसे ही निश्चिंतता से अपनेपन से धरती के ऊपर बैठो और पूर्ण समर्पित होकर आप धरती से प्रार्थना करो कि मैं आप की ओर संपूर्ण समर्पित हूँ। मेरे चित्त को शुद्ध व सशक्त करने की कृपा करे। तुम महसूस करोगे तुम्हारे भीतर की खराब ऊर्जा के स्पंदन होना चालू हो गए। और तुम्हारा चित्त सशक्त व शुद्ध हो जाएगा।"

कुछ दिन अभ्यास करने के बाद अनुभव किया कि कुछ समय तक भूमि पर बैठकर ध्यानसाधना करने पर चित्त जल्दी से एकाग्र होता था और बाद में बड़ा शांत और अच्छा लगता था। और शरीर में भी एक हल्कापन महसूस होता था।

भूमिमाता चित्तशुद्धि करने में बड़ी सहायक होती है। जब चित्त सशक्त हो जाता है, तो शरीर भी स्वस्थ हो जाता है। भूमि की गुरुत्वाकर्षण शक्ति चित्त को और शरीर को संतुलन में लाने का कार्य करती है, बशर्ते हम उस संतुलन के लिए तैयार हो जाए। प्राकृतिक शक्तियों का उपयोग स्वेच्छा से किया जा सकता है। जबरदस्ती के साथ किसी को भी प्रकृति के साथ जोड़ा नहीं जा सकता है।

गुरुदेव के प्रकृति के प्रयोग

चंद्रमा के सान्निध्य में

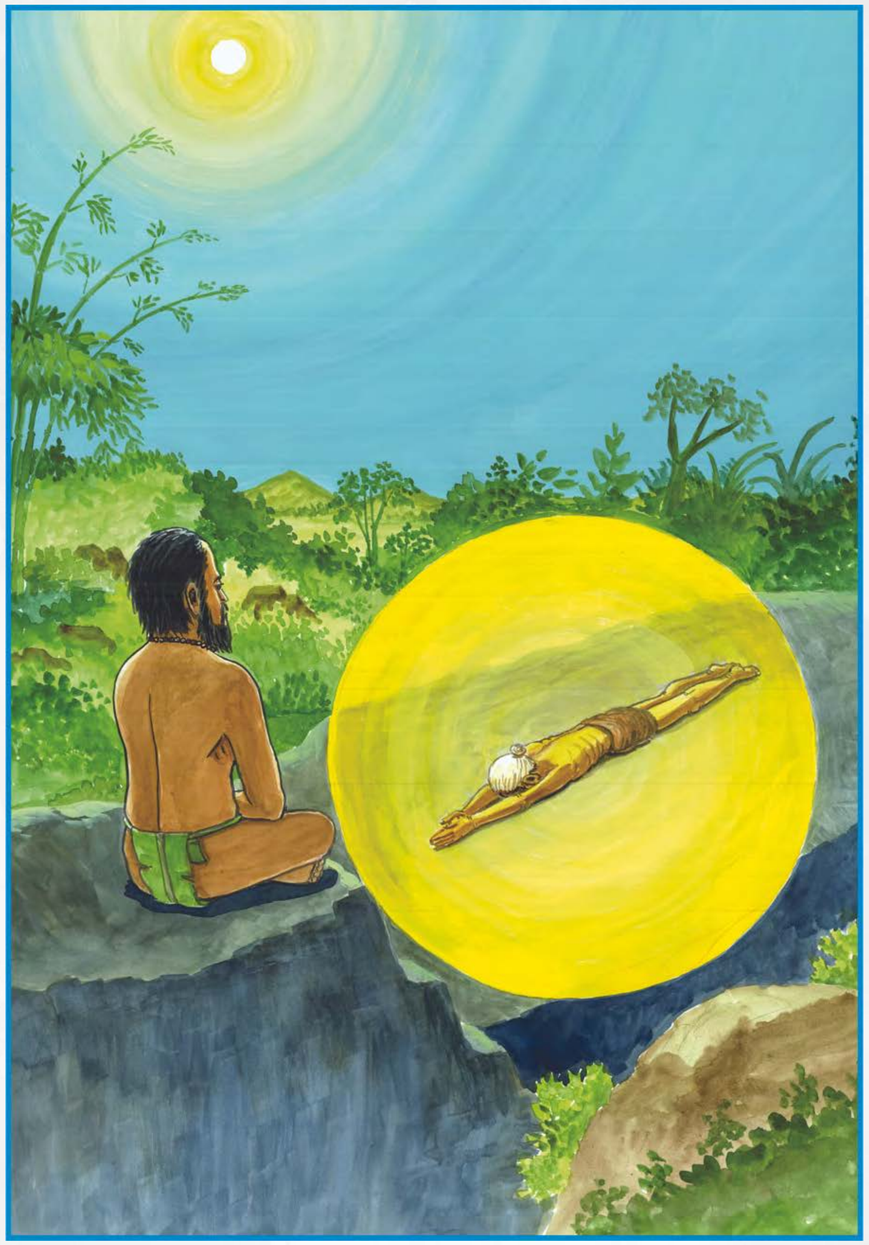

फिर उन्होंने शुक्ल पक्ष की प्रथम तिथि से चंद्रमा के प्रकाश में बैठकर चंद्रमा पर चित्त एकाग्र कर ध्यान करना सिखाया। रोज अभ्यास की समयावधि बढ़ती गई और पूर्णिमा की रात संपूर्ण रातभर कराया। चित्त को चंद्रमा पर एकाग्र करो और स्वयं के और चंद्रमा के बीच एक सूक्ष्म संबंध कायम करो और यह महसूस करो कि तुमने अपना संपूर्ण समर्पण चंद्रमा को देवता मानकर कर दिया है। और चंद्रमा की शीतल, पवित्र ऊर्जा चंद्रमा के प्रकाश के रूप में अपने पर बरस रही है और आप उस चंद्रमा के प्रकाश में शीतलता अनुभव कर रहे हो। और वह शीतलता तुम सूर्यनाड़ी के उपर विशेष रूप से अनुभव कर रहे हो। और धीरे-धीरे लिवर ठंड़ा हो रहा है। और उस साधना से आत्मशांति अनुभव हो रही है।

गुरुदेव के प्रकृति के प्रयोग

चित्त, अहंकार और मिट्टी का संबंध

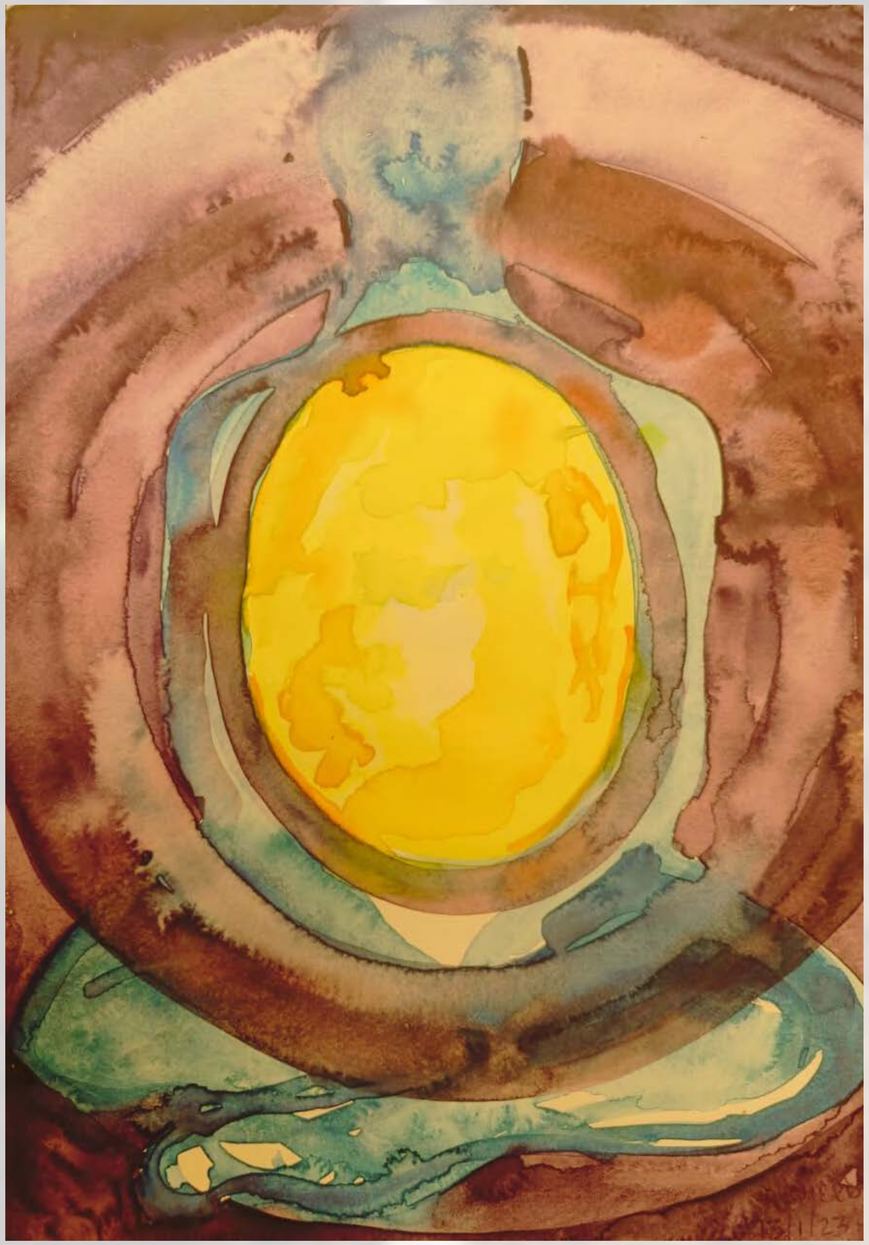

हम अगर अपने दाहिने हाथ का पंजा पूर्णतः जमीन पर रखें और आँख बंद कर चित्त को एकाग्र करें तो भूमि के भीतर की गतिविधियों को भी जाना जा सकता है। उस पृथ्वी के भीतर क्या चल रहा है, वह जाना जा सकता है। पृथ्वी के भीतर की आवाजों और भीतर के स्पंदन को भी जाना जा सकता है।

ऐसा जब हम जीवन में अनुभव करते हैं, तब हमारा चित्त प्रकृतिमय हो जाता है। और उस कारण चित्त को एक विशालता प्राप्त हो जाती है और 'मैं' के अहंकार के अस्तित्व से बाहर हम आ जाते हैं। और पृथ्वीतत्त्व से जुड़ने के बहाने कहीं न कहीं हम हमारी जड़ से जुड़ जाते हैं क्योंकि माटी हमारे जीवन का अभिन्न अंग है।

हमारी उत्पत्ति में, हमारे संगोपन में वह माटी बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। और हम उम्रभर उस माटी से अपना अस्तित्व अलग समझते हैं, फिर भी माटी को हमारे जीवन के बाद हमारे शरीर को स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं होता। मनुष्य को इसीलिए मिट्टी का पुतला कहते हैं।

आत्मा को मोक्षप्राप्ति में सहायता करने के लिए पृथ्वी एक वाहन के रूप में आत्मा को यह मिट्टी का शरीर प्रदान करती है। मिट्टी का पुतला बनकर आत्मा को एक साधन प्रदान करती है ताकि वह अपने जीवन में, अपने समय में मोक्ष-मंजिल को प्राप्त कर सके।